
3 1761 08158346 0

VISIT…

LANZAROTE
Caliente.COM

लाज

लाज

के० एम० मुन्शी

दिल्ली साहित्य सदन
शाहदरा दिल्ली–३२



मूल्य २ रुपये ५० पैसे मात्र

प्रकाशक:—

दिल्ली साहित्य सदन

सी० २०६, अरूणा नगर

शाहदरा, दिल्ली–३२

मुद्रक:—

नीरज फाइन आर्ट प्रेस,

सदर मेरठ।

१

दोपहर और संध्या के बीच का अन्तराल। अर्थात् तीसरे पहर की वह आलस्य पूर्ण अवकाश वाली बेला—जब कुलीन स्त्रियां वक्त काटने के लिए, चाय की प्रतीक्षा में सुई और सलाई का उपयोग करती हुई बातें करती हैं और उन क्षणों को कला के नाम पर समर्पित कर देती हैं। ऐसी ही बेला थी, और शिवगौरी कढ़े हुए रूमाल को कलात्मक रूप दे रही थी।

बहुत बड़ा ड्राईगं रूम था।

बड़ा गलीचा, एक संगमरमर की बड़ी गोल मेज और सैन्डहर्स्ट रोड पर एक सम्पन्न परिवार की झलक देने वाले आवास–गृह से ऊपर थी, वहाँ की आधुनिक टीपटाप, नये ढ़ग का आचार–विचार और उनमें पीसी हुई किन्तु अपने-आपके सिर मौर समझने वाली शिवगौरी।

उसका बस चले तो खा जाये हिन्दू समाज को। क्या दिया उसे इस समाज ने! प्रताड़ना, परेशानी और लज्जा के पहलू से निकलने वाली भावनायें! जो कुछ अतीत का गौरव था, उसे परिस्थितियों ने कुचल डाला था और अब शेष थी स्पर्धा, जीवन के साथ होड़, और परिस्थितियों से होने वाली गतिविधियों से समझौता।

अविवाहित भाई मोती राम ने उसकी भावनाओं को पुनः झिझोड़ डाला था और वह स्त्री समानता संघ के सदस्यों की राह जोहती हुई अचानक अपने पति की बात सुनकर उग्र हो गई थी।

असफल दाम्पत्य जीवन रहा था। उसका जीवन की तमाम कटुता उसके चेहरे पर आकर केन्द्रित हो गई थी मोतीराम के यह बताने पर कि उसका पति आज उसकी आँखों के सामने से गुजरा था, वह उबल पड़ी:

'हाय रे, मेरा भाग्य ! क्यों तुम्हारा उसके बिना काम नहीं चलता ! जहाँ-तहाँ देख ही लेते हो, सारे गांव का सूरज उग सकता है पर मेरा सूरज……'

'बहन !'

'मार डालो इस बहिन को। यही कहोगे न कि वह कोई समझौता करना चाहती है। भाई के घर की रोटियाँ खाती हूं न ! जाने कौनसा बदला लिया मेरे माँ-बाप ने !'

'उनसे क्या बहन, वे तो……'

'मर गए यही न—मर गए और मुझे जीते-जी मार गए; अगर इसी तरह दम घोटना था तो मुझे पढ़ाया ही क्यों था ! कैसा निराधार बना डाला है इस हिन्दू समाज ने हमें ! टके कमाने की जरा-सी भी क्षमता नहीं और नारी पर उपकार का इतना बोझ है कि……'

'सुनो तो मेरी बहन !'

शिवगौरी भड़की—'क्या सुनूं। अब मैं नहीं पूरी दुनीयां सुनेगी। मैं प्रतिशोध लेकर ही रहूंगी हमारी स्त्री समानता संघ……'

मोतीराम निरुत्तर-सा खड़ा रहा। हर बार बात इसी स्त्री समानता संघ पर आकर समाप्त हो जाती है। और वह निरुत्तर-सा अपने इस घर को देखता रहता है जहां उसकी बहन पुरुष समाज के प्रति विष वमन करती है और तरह-तरह की मूर्तियां इस घर को आबादी करती हुई अच्छा-खासा अखाड़ा बना देती है।

कई सदस्याएँ तो काफी स्थायी है, रोज आती है, सभा-मीटिंग, जोश खरोश और उसके बाद घृणा का प्रसार करती हुई अपना-अपना प्रतिबिम्ब आईने में देखने लगती है।

अनायास उसे याद आ गई वे सूरते—जिनमें बी० ए० पास शशिकला है, जिसके पास सौन्दर्य है, यौवन है, आकर्षण है और साथ ही एक लम्बी–चौड़ी जायदाद की विरासत। विधुमुखी, जिसने कुन्दनलाल

से ब्याह किया है । दाम्पत्य जीवन में रहकर भी दाम्पत्य से अधिक प्रश्न नहीं है । फिर भी खिन्न हँसी के बीच गम्भीरता का पुट और चालीस वर्ष की अधेड़ मिस पिरोजा जैसी आधुनिक प्रौढ़ा के बीच ऐसी मालूम होती हैं, जैसे पाउडर और लिपिस्टक, बॉब्डकट हेयर और उनसे चिपकी अधेड़ता में छिपा चिर कुमारत्व लिये मिस पिरोजा गुड़िया हो—और गंगा बहन सफेद वस्त्रों में सिमटी एक देवी और वह स्वयं उन दोनो के बीच लुढ़कती एक मानवी ।

जब-जब ये लोग एकत्रित होते हैं, दब्बू मोतीराम दुम दबाकर भाग जाता है और जहाँ–तहां वक्त काटता रहता हैं । सोचता रहता है, क्या खराबी है इन्द्रजीत और शिवगौरी के गुणों में, जिसके कारण एक दिन प्रसन्न न रह पाया यह दाम्पत्य युगल । सम्भवतः यह पुरुष और नारी का सघष नहीं; यह आधुनिकता और प्राचीनता के बीच का सघर्ष है ।

वह सोचता है, देखता है, फिर इन्द्रजीत पर झुंझला उठता है, उसे कुत्ते के नाम से सम्बोधित करता है, समझौता कराने के मनसूबे बांधता है और फिर वे सब के सब इस ड्राइंग रूम में आकर, यहां स्त्री समानता संघ की सदस्याओं की बे मतलब बहस में छिन्न-भिन्न हो जाते हैं । आज अचानक उसने इन्द्रजीत को देखा तो उसका भ्रातृत्व उमड़ पड़ा और तीसरे पहर ही दौड़ा-दौड़ा आआ । परन्तु अधुनिक शिवगौरी भला उसके सुभाव को कैसे मानती ! उसने स्त्री समानता संघ का चक्कर छोड़ा और जैसे ही स्त्री समानता संघ को बैठक का आयोजन उसके मस्तिष्क में आता, वह एक क्षण नहीं ठहर पाता । पर आज उसने हिम्मत से काम लिया, बोला—

'कोई आने वाला है क्या ?'

'हाँ ।'

'कौन ?'

'स्त्री समानता संघ की समिति की सदस्यायें ।'

'अच्छा ?'

'हाँ—अभी-अभी टेलीफोन आया है। वे आती ही होंगी। तुम जाओ।'

'मैं।'

'हां, हां तुम।'

'पर क्यों गौरी, अगर आज मैं तुम्हारे मित्रों को देख ही लूँ तो···'

'क्या···'

'नहीं, नहीं, एक बात है।'

शिवगौरी की बड़ी-बडी आंखों में शरारतमय क्रोध झिल मिला आया। अठाईस वर्ष की इस बड़े कद की लड़की के माथे का बड़ा सा टीका चमक उठा। उसके भरे हुए गाल, गहरे पीले रंग की साड़ी, नीले रंग की चोली, सफेद स्लीपर और मुट्ठी में फरफराता हुआ रूमाल अनायास इस ढ़ीढ़ता से अस्थिर हो उठे। उसके वे हाथ, जो हर कागज को मसलते, श्रीकृष्ण सुदर्शन की भाँति मसल फैंकने की दृढ़ता भूल से गये। तिलमिलाकर बोली—'हां हां क्यों नहीं ? पुरुष सब एक से ही होते हैं। औरत को देखा और हुए लट्टू। बाबा, मैं···'

'तुम से बाज आई, यही न।'

'हां मैं बाज आई।'

मोतीराम हँसा और इस ड्राइगं रूम में लोप हो गया।



२

वही ड्राइंग रूम है। बस समय कुछ और खिसक गया है। कमरे की हवा तरह-तरह के सैंट से सुगन्धित हो उठी थी। कई स्त्री-कंठ उबल रहे थे। अजीब-अजीब आवाजें थी और तरह-तरह की चर्चायें।

स्त्री समानता सदस्य संघ की बैठक हो रही थी।

सब ही उपस्थित थीं।

विधुमुखी कुन्दनलाल के साथ आई थी,। शशिकला का निखार और यौवन छलका पड़ता था। तीनों पुरुषों के अत्याचार पर विचार-विनिमय कर रही थीं।

विधु के सामने प्रश्न हुआ, हमारे स्त्री समानता संघ ने अब तक बातें तो बहुत की हैं, पर अब काम भी करना है या नहीं ?'

विधुमुखी ने उत्तर दिया—

'बहन करें क्या ? हम गुजराती नारियां स्वभाव से ही सुस्त हैं—आलसी हैं ! कुछ करने की हिम्मत नहीं। बातें तो बढ़-चढ़कर करेंगी, पर घर पहुंचते ही पति के सामने गौ बन जायेंगी। कहे देती हूं—जब तक मर्दों के सिर पर चोट न करेंगी, तब तक कुछ न होगा।'

कहते-कहते विधुमुखी के मुख पर खेद झलकने लगा। पुनः घंटी जोर से बजी। विधुमुखी ने कहा—'प्रतीत होता है शशिकला आ गई।

शिवगौरी ने पूछा—'शशिकला ने तो इसी साल बी० ए० किया है न ?'

विधुमुखी बोली—'हां किया तो है।'

'इसके चाचा से मैं दो बार मिली हूं। पर इससे कभी भेंट नहीं हुई। हमारी समिति की सदस्या बन गई है। आज इसलिए निमन्त्रण दिया है। सुना है, बड़ी प्रतिभाशाली है।'

विधुमुखी हँसकर बोली—'जरूर होगी, प्रतिभाशा मिली है, तभी तो सब तारीफ के पुल बांधते है।'

शिवगौरी बोली—'चाचा तो इस के धनवान हैं न।'

उत्तर मिला—'धनी तो है। हमारे तो आसामी हैं। बड़े भले, पर जानती हो......।'

'रुक क्यों गई, बोलो न।'

'आदमी तो भले हैं, बेहद भले। पर नारी जाती के नाम पर तो उनकी नाक चढ़ जाती है। नारी को नर्क समझते हैं। और मुंह देखना भी अच्छा नहीं समझते।'

शिवगौरी को आश्चर्य हुआ। बोली—'अच्छा! फिर यह शशिकला तो बड़ी काम आएगी। चाचा से हमें क्या काम?'

तभी शशि ने प्रवेश किया।

बीस वर्ष का छलकता यौवन, आभायुक्त प्रभा और उन पर लद-पद बहुमूल्य. नये फैशन के कटे वस्त्र।

आते ही पूरा कमरा महक उठा और उसकी उज्वल हंसी मुस्कान के साथ चारों तरफ फैल गई।

'तुम विधु. तुम गौरी......।'

'आओ आओ, क्षण-भर के लिए स्वागत, कर-मर्दन और फिर रही उज्वल हंसी।'

'कहो कुशल तो हो न?' रूप-लावण्य ने चार चांद लगा दिये थे। आते ही बोली—हैलो! बिधु बहन! क्या हाल-चाल है! शिवगौरी! कुशल से हो न!'

शिवगौरी बोली—'आओ न शशि! में और विधुमुखी अभी-अभी स्त्रियों की स्थिति पर ही बिचार कर रही थी। पर शशि! बुरा तो मानना मत। हम केवल बातें ही करती रही हैं, कुछ ठोस कदम नहीं उठाती और पुरुषों की निर्दयता, कठोरता और उनके अत्याचार उसी तरह जारी ही रहते हैं।'

विधुमुखी का व्यंग्य फूटा। बोली—'क्या सोचती हो शशि बहन!'

तुम्हारा विवाह नहीं हुआ; पर तुम्हें पुरुष का अनुभव तो होगा ही !

शशिकला गर्व से तनकर बोली—'जरूर है। मुझे पुरुष का अनुभव है। काका तो नारी को नर्क बतलाते हैं। और फिर पुरुषों को भी मैंने देखा है। खूब अच्छी तरह उन्हें जानती हूं, कि उनके मन में नारी के प्रति कैसी भावनाएं हैं। मुझे तो यह नहीं समझ में आता कि पढ़ीलिखी लड़कियां विवाह के लिए राजी कैसे हो जाती हैं।'

विधुमुखी को कटाक्ष उभारा—'हां ठीक ही तो है, कौन जाने शिक्षिता कैसे विवाह कर लेती हैं, विवाह करने में तो लाभ ही लाभ है।'

शिवगौरी का समर्थन भी उमड़ा—मुझे भी यह बात समझ में नहीं आती। पर मेरा क्या ? में ठहरी जन्म की दुखिया। जीवन बाल्यकाल में ही नष्ट हो गया था। पर उस माधुरी को जरा देखो—कल तक वह हमारी समिति की सदस्या थी और आज त्यागपत्र देकर पुरुष से विवाह कर बैठी है, वही ना—दिन-रात पुरुषों के दुर्व्यवहार की निन्दा करती न थकती थी।'

इस पर शशिकला कहने लगी—'माधुरी उसे तो मैं पहले ही व्यर्थ समझती थी। उसके मस्तिष्क पर आर्य विचारों के भूत ने अधिकार कर रखा है। ऐसे आदमी किस काम के।'

मुँह उठाती हुई विधुमुखी बोली—'आर्य-सँस्कार ! छिः ! सत्यवादी हरिश्चन्द्र महान का संस्कार जिसने अपनी पत्नी को बेच डाला और सत्यवादी बने रहे ?'

शिवगौरी ने अनादर भरे स्वर में योग दिया—'और मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान् का अवतार रामचन्द्र ! जिसने अपनी स्त्री को घर से निकाल बाहर किया !'

शशिकला ने हंसकर कहा—'और द्रोपदी के चीर को खींचने वाला महाद् वीर !'

विधुमुखी होंठ काटती बोली—'और वह धर्मराज युधिष्ठिर जिसने नारी को जुए के दांव में लगा दिया। सभी तो संस्कार-वश हैं।'

शिवगौरी क्रोध-भरे स्वर में कहने लगी—'सोती हुई पत्नी को छोड़कर चले जाने वाले तथागत गौत्तमबुद्ध भी क्या कम थे?'

शशिकला ने ठहाका लगाया—'बस चुप क्यों हो गई? अभी तो सोलह हजार एक सौ आठ स्त्रियों से रमण करने वाला कन्हैया शेष है। वह साक्षात ब्रह्मचारी भगवान्?'

पुरुष–निन्दा का कर्य-क्रम और चलता अगर मिस पिरोज का आगमन न होता। अलार्म धण्टी बजी और मिस पिरोज का आगमन हुआ।

मिस पिरोजा—आयु कोई चालीस वर्ष, मुख पर पाउडर के अनेक लेप होठों पर सुर्खी, बाब्ड हेयर, बायें हाथ में पहने हुए कड़े में ठुँसा हुआ रूमाल और मटकती चाल।

साक्षत् पारसी सम्प्रदाय संस्कृति की एक मात्र प्रतीक। ऐसा लगता है जैसे कुमारत्व, नारी स्वतन्त्रता और पुरुष होड़ उनमें कूट–कूट कर भरी है। जीवन कला के लिये है। चाहे वह नग्नता के प्रदर्शन में क्यों ना हो—विश्वास को लेकर उनके बारे में तरह–तरह की चर्चाएँ मिलती हैं। और वे कला को किस रूप में ढालती हैं, इस विषय में भी लोग रस लेते हैं।

उनके साथ ही है, गंगा बहन। एकदम सादगी और भारतीय नारी-गौरव की प्रतीक। हँसी और मुस्कान का पिटारा।

मास्टरनी के नाम से ही प्रसिद्ध हैं।

आते ही स्वागत की मुस्कान फैल गई।

'आओ।'

शिवगौरी ने स्वागत करते हुए कहा 'मिस पिरोजा आओ ना!'

'कैसी हो?'

'तुम बताओ ।'

'हम क्या बतायें ? दिन-प्रति-दिन संघ की समस्यायें कमजोर और गद्दार होती जा रही हैं। कुन्ता बाई तो पतिदेव के साथ पधार ही गई, पर रहीं गुड़िया······'

'गुड़िया हो या, पंखा ।'

'पंखा ·····'

पीरोजा बोली—'मुझे गर्मी जो सता रही है। बाप रे, और आज रात को कन्सर्ट है।' साथ ही उनकी नजर शिवगौरी की ओर घूमी, बोली—'आप······'

'आप नहीं जानती ।

'न।'

'आप हैं मिस शशिकला, और—'शिवगौरी ने परिचय कराते हुए कहा—आप हैं पिरोजा। एक नई सदस्य, पिरोजा जैसी कलाकार से मिलकर निश्चित रूप से प्रसन्न होगी और गंगा बहन को आप जानती ही हैं न।

आप स्कूल मिस्ट्रेस हैं।'

सबके हाथ कुशल समाचार ज्ञातव्य के लिए मुड़े और गंगा बहन विधु से उलझ पड़ीं।—

'विधु मसविदा तैयार हुआ ?'

'जी ।

'कुन्दनलालजी ने कहा था न ! अब तो काफी समय हो गया है।'

'हो तो गया है।'

'फिर ?'

'शशि ने ले ली है पूरी जिम्मेदारी। अब तो उन्हीं के सिर है।'

'पर···'

'कहो।'

शशि ने कहा—मैंने कुन्दनलालजी से कालिज में बात कर ली हैं। उनका कहना है कि मसविदा तैयार है। कहते थे···।'

'काहे का मसविदा ?'

'कानून का।'

'कानून !'

'हां, स्त्री संघ अपना संविधान बनाने जा रही है। संविधान स्त्री की रक्षा करेगा। उसकी आजादी की रक्षा करेगा। विवाह करने पर जो सम्पत्ति पति को मिलती हैं, तथा मरने पर जो सम्पत्ति रहती हैं, वह पत्नी को मिलनी चाहिए। पुरुषों की नाक में नकेल डालने के लिए तलाक की सुविधा रहे। ऐसी ही बातें है जिन्हें मिस्टर कुन्दनलाल तैयार करेंगे और फिर......'

पिरोजा ने बात काटी—'स्वप्न मत देखो। बना लो। पर काउँसिल में कैसे जायेंगे। बनिए-महाजन तो खून पी लेगे।'

'और हिन्दू ही कौन कम हैं ?'

'तब ?'

'धारा सभा में भी क्या मानेंगे ?

'मानेंगे नहीं तो कहां जायेंगे !

'अच्छा।'

'हा, और क्या।'

शशिकला वोली—पुरुष न माने तो भी हम युद्ध करेंगे। ये बिना लड़े नहीं मानने वाले। जब तक की उनके हाथ में घर है; समाज है कानून है, नीति है, तब तक वे कुछ नहीं होने देंगे।'

'ठीक।'

'ठीक तो है—'शशिकला बोली—'कानून भी बन जाये तो क्या' अधिकार तो लड़ने से ही मिलेंगे !'

'अच्छा।'

'हाँ और लड़ाई के लिए चाहिये पैसा, धन !'

'धन की क्या कमी है !

'क्यों ?'

'अरे तुम इक्कीस की हुई; और पैसा बरसा।'

'अच्छा।'

'और नहीं तो क्या ?'

'जहाँ इक्कीस को लांघा, पैसा तुम्हारे पैरों में गिरा।'

शशिकला ने प्रतिवाद किया—'सब तो बनेगी नहीं। एक-दो से क्या है—सवाल एक शशि का नहीं, पूरे समाज का सवाल है। अगर इन पुरुषों के बीच जीवत रहना है तो सामर्थ्य लाना होगा। धन कमाने की शक्ति लानी होगी।'

पिरोजा बोली—'यू मीन इकनामिक इन्डीपेडेन्स—याने आर्थिक स्वतन्त्रता······'

'हां, गंगा बहन जो अब तक चुप थी बोल पड़ी—'असल बात तो यही है। आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना सब बातें कोरी बातें ही हैं—सब व्यर्थ हैं।'

शिवगौरी को आवेश आ गया। जोर से हाथ हिलाती हुई बोली—'मगर आर्थिक स्वतन्त्रता सबके लिए कहां सम्भव है ? अभी तो हमें पुरुषों का ही खाना है। और इन्हें ठीक करना है और पुरुष हमें क्या मुफ्त में खिलाते हैं ? हमसे काम नहीं लेते क्या ? मजदूरीं······परिश्रम और फिर। क्यों भई शशि ?'

शशि ने उत्तर दिया—'शिवगौरी बहन जब तक नारियों को आर्थिक स्वतन्त्रता नहीं मिलेगी, तब तक विवाह से बचने का उपाय नहीं हो पायेगा। मेरे पास धन न हो और उपार्जन की ताकत न हो, तो फिर गुलाम ही रहना होगा न। रहना ही पड़ेगा ?'

'और फिर यह अन्याय है।'

'जानती हो क्या हुआ ? मेरा बाप मरा तो सारी जायदाद भाइयों ने बाँट ली।'

'क्यों न बाटें' शिवगौरी ने कहा—'नहीं तो उन्हें पुरुष कौन कहे !'

शिवगोरी ने जोर से समर्थन किया, बोली—

'हां यही तो पुरुषों का स्त्री के प्रति अन्याय है । अगर पिता की जायदाद में पुत्रियों को भी भाग मिले तो उन्हें फिर विवाह के बन्धन में पड़ने की आवश्यता ही क्या है ?'

गगा बहन ने उत्तर दिय—'गरीबों की लड़कियों का क्या बनेगा ? उन्हें तो धन कमाने के सिवा कोई उपाय नहीं । मुझे ही देखो । आज निरन्तर २५ वर्ष से कमा रही हूं । किसी पुरुष की परवाह नहीं की ।'

शशिकला बोली—'ठीक है । जब तक हम विवाह के बन्धन में बंधती रहेंगी, तब तक आर्थिक स्वतन्त्रता के लिए हम मेहनत न कर सकेंगी परिणाम, होगा····· दुष्परिणाम, पुरुषों की गुलामी······विवाह हमारे सब दुखों की जड़ है ।'

सबने इस पर अपनी सहमति जाहिर की ।

गंगा बहन ने पुनः बात घड़ी—'पर पुरुषों से कुछ तो सम्बन्ध हमें रखना ही पड़ेगा न ?'

'बिलकुल ।'

शिवगौरी आवेश में बोली—'पुरुषों से पूरी तरह छुटकारा पाना, उनसे कुछ भी संबन्ध न रखने का उपाय है, पर वह हमें सूझता नहीं गंगा बहन ! जब निःस्वार्थ प्रेम विवाह की जगह ले लेगा तब आनन्द ही आनन्द है—स्त्रियों के सब संकट टल जायेंगे ।'

'कवि नानालाल के 'जयाजयन्त' में यही दिखलाया गया है । प्रेम ऐसा हो जो वासनाहीन हो । स्त्री-पुरुष को सम्बन्ध पर ही निर्भर न हो । दोनों स्वतन्त्र रहें, दोनो उन्मुक्त रहें । दोनों में से एक के जिस्मे कोई भी कर्त्तव्य न हो । यह कर्त्तव्य खतम हुआ की परतन्त्रता समाप्त हुई । तब पुरुष भी एकदम सीधे हो जायेंगे ।'

शशिकला को हंसी आ गई बोली—'भावना के लिए, प्रेरणा के लिए स्त्री को पुरुष से संबन्ध रखना चाहिए। स्त्री देवी है, पुरुष राक्षस है। स्त्री अपने पुरुष मित्रों को प्रेरणा दे सकती है। नारी में अगर वास्तविक नारीत्व है। भले ही उसके मन में कुछ भी हो. उसके सम्मुख सभी पुरुष झुक सकते हैं। उसे पूज्य और उपास्य मान सकते हैं। फिर वह उनकी भाग्यविधात्री होकर उनमें विचारों को उत्पन्न कर देती है। उनकी भावनाओं को तरंगित कर सकती है और उनका जीवन–सूत्र बन सकती है।

कहते–कहते शशिकला का मुख तेज से आरक्त हो गया। कुछ रुक-कर वह फिर गर्व-भरे स्वर में कहने लगी।'

'जान आफ आर्क पुरुषों से आजाद रहने के लिए जन्म-भर कुँआरी बनी रही। हम भी स्त्री-स्वतन्त्रता के लिए आजन्म कौमार्य व्रत क्यों न ग्रहण करें?' इस भाषण से पूरा वातावरण सजग हो गया। दूसरी सदस्यायें भी सक्रिय हो गई।

पिरोजा ने झट से आईना निकाला और वह अपने होंठों को रंगते हुए कहने लगी—

'मुझे यह सब नहीं भाता। मुझे तो एक पुरुष चाहिए—लव करने के लिए, एक डाँस के लिए, एक डिनर पर बाँह में बाँह डालकर ले जाने के लिए।'

'हूं, जान आफ़ आर्क।' पिरोजा ने पुनः कहा—

'योअर जान आफ़ आर्क इज़ ए प्रीहिस्टोरिक आइडियल—तुम्हारा जाँन आफ़ आर्क एक प्रागैतिहासिक काल का आदर्श है—बहुत पुराना नमूना। उसका हृदय कहीं पिघल सकता था?'

शिवगौरी ने भी स्नेह-सिंचित नयनो से शशिकला की ओर देखा बोली—'शशि! तुम्हारे चाचा का क्या ख्याल है इस बारे में?'

शशिकला बेमन-सी बोली—'चाचा को तो जैसे स्त्री-स्वतन्त्रता के नाम से ही चिढ़ है। पर बेचारे करें क्या? अगले महीने २१ बरस पूरे करके मैं

वयस्का (वालिग) हो जाऊँगी और अलग रहना शुरू कर दूंगी। फिर उनका रास्ता ये और मेरा वो।'

पिरोजा ने कहा—'तुम्हारे अंकल पुराने ज़माने के लगते हैं।'

शशिकला कुछ देर चुप रही और फिर बोली—'वे दूसरी बातों में बड़े प्रगतिशील हैं—प्रोग्रेसिव। पर हमारे दृष्टिकोण के—स्त्री-स्वतन्त्रता के कट्टर विरोधी हैं—एकदम शत्रु!'

पिरोजा—'तो उनकी श्रीमती के द्वारा क्यों न उनके विचारों में परिवर्तन......'

शिवगौरी ने ठण्डी साँस ली, बोली—'बेचारी की मिसेज है ही कहाँ! कहां! उसका तो विवाह ही नहीं हुआ।'

शशिकला, 'स्त्री शत्रु जो ठहरा।'

विधुमुखी का ध्यान अचानक ऊपर गया। चुपचाप कुछ देर बैठी रही। बिधु पुनः बोली—'हमारा क्या होगा? हम ठहरी शादीशुदा।' 'क्या हमें इसी तरह पिस-पिसकर घुट-कर मरना पड़ेगा? मैं कहती हूं—असली समस्या तो हमारी—और हम जैसी विवाहिताओं की है।'

शशिकला ने सुझाया—'इस समस्या का समाधान तो तुम्हारे हाथ में है। तुम चाहो तो पुरुषों को वश में कर सकती हो—पालतू जानवर बना सकती हो।'

विधु ने कटाक्ष किया—'जरूर इस संसार में कैसा अन्याय है! यह मर्द चाहे जो करें, चाहे जहाँ जायें, कुमारियों तथा पराई स्त्रियों से मीज करें, उन पर कोई आक्षेप नहीं। कोई जुल्म नहीं, कोई आरोप नहीं। और अगर नारी अपने पड़ोसी के साथ बैठकर जरा चाय भी पी ले तो फिर देखो कैसा कोहराम मचता है, संसार तुम्हारी धज्जियाँ उड़ा देगा, घर में ज्वाला भड़क उठेगी।'

शिवगौरी को आवेश आ गया। सोचने लगी—यह सब अत्याचार क्यों सहन करती हैं? ओह! उसका सत्यानाश पुरुष के अत्याचार से ही होता है।

अब जो होना है सो हो, उनने यह अत्याचार सहने से इन्कार कर दिया है। इससे तो मर जाना बेहतर।

विधुमुखी बोली—'सभी नारियों की एक ही दशा है। पर बेचारी करें क्या? पुरुष अपनी जिम्मेदारी न निभायें, विवाह के विषय को तोड़ डालें—तो स्त्रियां इस तरह दुख और कष्ट क्यों सहन करें? किस लिए वे दुख सहें? पुरुष यदि विवाह के नियम तोड़ते हैं तो स्त्रियाँ क्यों न तोड़ें? दुष्टता का ही बर्ताव करना चाहिए। नीतिशास्त्र में भी चाणक्य ने कहा है—शठे शाठ्यं समाचरेत्।'

गंगा बहन ने आपत्ति की—

'और मार पड़े तो?'

पिरोजा ने पुनः जेब से शीशा निकालकर लिपस्टिक से होठ रंगे। बोली—'बनिये-महाजन जंगली जानवर हैं—वे Brutes हैं।'

इस 'ब्रूट्स' शब्द पर शशिकला मुस्कराती हुई बोली—मेरे चाचा का कथन है कि स्त्री को मार-पीट करना—उसे वश में रखना पुरुष का जन्म सिद्ध अधिकार है—ढोल गँवार शूद्र पशु नारी···'

पिरोजा ने जोर से चीखकर कहा—'शेम! शेम! शर्म आनी चाहिए पुरुषों को!

शशिकला जोश-भरे स्वर में कहती गई—'अरे चचा ने तो कहा कि पुरुष को पूरा हक है कि वह जिस तरह चाहे अपनी स्त्री को गढ़े। यह बात दूसरी है कि भले आदमी अपनी स्त्री को शिक्षा द्वारा पढ़ाते हैं और बुरे आदमी डण्डे से!'

पिरोजा का चेहरा क्रोध से तमतमा गया। वह बोली—'छी अचरज है—तुम ऐसे लोगों के साथ कैसे रह पाती हो—मैं हूं तो एक पल भी न ठहरूं।'

शशिकला कहती गई—'मेरे चचा स्वयं ऐसा कभी नहीं करते; पर उनके भाव इसी प्रकार हैं।'

विधुमुखी का मुख मलीन हो गया। बोली—'शिवगौरी! यदि पुरुष

दूसरी स्त्रियों से मौज मना सकते हैं—विवाह-व्रत भंग कर सकते हैं तो क्या स्त्रियों को कुछ नहीं करना चाहिए ?'

शिवगौरी ने जोश-भरे स्वर में कहा—'हाँ। तभी पुरुषों की अकल ठिकाने आयेगी।'

पिरोजा ने होंठ संवारते हुए कहा—'वाई नॉट ?—क्यों नहीं ?'

गंगा बहन कहने लगी—'मुसीबत तो इसी बात की है। हम स्त्रियाँ कर्तव्य के विषय में कभी भी एकमत न हो सकेंगी।'

तुम्हारा इस विषय में क्या मत है ?

शशिकला ने उत्तर दिया—'इसमें हमारा स्त्री-समानता संघ क्या कर सकता है ? हाँ इसमें से प्रत्येक नारी स्त्री समता की देवी बन सकती हैं। चाहे इस विषय में हमारे बीच मतभेद हो; पर इस पर हम सब एकमत हैं कि पुरुष से स्त्री की समानता की स्थापना होनी चाहिए।'

गरदन मटकाती शिवगौरी ने कहा—'हमारे सांस-सांस से स्त्री-स्वतन्त्रता का राग निकलना चाहिए।'

शशिकला समर्थन करते हुए बोली—'हमारे एकाएक काम में स्त्री-समता की प्रेरणा होनी चाहिए।'

शिवगौरी मुठी बाँधकर ऊंचे स्वर से कहने लगी—'हमारी बाँहों में स्त्री-समता की शक्ति रहनी ही चाहिए।'

शशिकला बोली—'स्त्री-समता ही हमारा जीवन-मंच है। इस लिए मैं कहती हूं लेकिन पर-पुरुष से कुछ तो सम्बन्ध रखना ही पड़ेगा न !'

यह एक ऐसा प्रश्न था जिसपर साधारण ढंग से उत्तर देना कठिन होता। औरत और मर्द यूँ तो सृष्टि के दो पहिए हैं—उन्हीं से जीवन की गाड़ी चलती है। पर जब एक दूसरे पक्ष की कटुता पर आता हैं तो अकसर इसी तरह की वार्ता बना लेता है। यहाँ भी यही हुआ, जसे यह समस्या आई, सब मूर्तिवत हो गईं। समस्या अन्तर्हीन हो, ऐसी बात नहीं, पर आज के इस युग में काफी कष्टदायक सी हो गई है।

शशिकला बोली—'स्त्री-समता ही हमारा जीवन-मन्त्र है। इस पर मज़बूत रहने की हमारे अन्दर शक्ति होनी चाहिए।'

अनुमोदन शिवगौरी ने किया—'भले ही आकाश फट पड़े—प्रलय आ जाए; पर हमें स्त्री-स्वातन्त्र्य के सिद्धान्त पर अटल रहना चाहिए।

शशिकला ने बलपूर्वक कहा—'हमारे भाव और कर्म में धार्मिक जोश आ जाय—कट्टरपन छा जाय तभी इस युद्ध में जीत पायेंगी। क्योंकि 'भइ शिवगौरी !'

शिवगौरी ने अनुमोदन किया—'हाँ, तभी स्त्रियों के जीत के नगाड़े बजेंगे।'

पिरोजा ने भी अनुमोदन किया—'ठीक, बिलकुल ठीक !'

शशिकला बोली—'हर एक को अपनी शक्ति के अनुसार उपाय समझ में आ ही जाता है। पुरुषों से बदला लेने के लिए शिवगौरी बहन को अफ़लातूनी प्रेम (Platonic love) में भरोसा है तो विधु बहन 'शठे शाठ्य समाचरेत' की नीति में विश्वास रखती हैं।'

'और शशि का विश्वास है कि विवाह ही नहीं करना चाहिए।'

'विवाह ही स्त्रियों की दासता की जड़ है।'

'...मिस पिरोजा का विश्वास है—मर्दों के दिल तोड़ने में ही हमारा कल्याण है। क्यों विधू ?'

विधु बोली—'गंगा बहन स्त्रियों की स्वाधीनता में विश्वास रखती हैं, वे इस पर स्वयं आचरण भी करती हैं। क्योंकि शशि !'

शशि तुनक पड़ी—'हममें से भी देवी प्रेरणा से प्रेरित हैं और उन प्रेरणाओं को पूरी कर लें तो समझो हमें सफलता मिली। भावनापूर्ण एक क्षण सहस्रों वर्षों से कहीं बढ़ाँ-चढ़कर है। मेरी बात गलत तो नहीं है शिवगौरी बहन ?'

शिवगौरी ने उत्तर दिया—'गलत कैसे हो सकती हैं। बहन ! हमारी सभा की तुम ही तो आभूषण हो। इतनी छोटी-सी आयु में तुमने न जाने ये सब कहाँ से सीख लिया है !'

इस बात पर शशिकला हँस पड़ी। कहने लगी—अपने चाचा की बातों से मुझे बहुत ज्ञान प्राप्त हुआ है। स्त्रियों के बारे में वे जो मत प्रकट करते हैं, उसके विरुद्ध मैं अपनी धारणा बना लेती हूं। अपने कालेज के मित्रों के सम्पर्क से मुझे उनके अनुभवों द्वारा भी बहुत कुछ शिक्षा मिली है। मैं उनकी प्रेरणा देवी बनकर उन्हें उंगलियों पर नचाती रही हूं।'

अचानक विधुमुखी के मुँह पर हँसी फूट पड़ी। बोली—'शशि बहन ! यदि पति विपरीत मार्ग पर चलें तो क्या हमें भी वैसा ही करना चाहिए ?'

किन्तु इसका उत्तर शिवगौरी ने दिया—'क्यों नहीं।'

'क्योंकि नहीं ! जो उसे अधिकार है, वह तुम्हें भी है जो बात पुरुष के लिए ठीक है, वह स्त्री के लिए ठीक क्यों नहीं !'

अचानक उसकी नजर चाय पर पड़ी। चाय का स्वागत करती हुई बोली—'सब कुछ छोड़ो, भई ! अब तो बस चाय से प्रीत लगाओ। और सोचो कि किस तरह मर्दों से बदला लिया जा सकता है ताकि उन्हें तो यह मालूम हो जाये कि कितने बीसी सो होते हैं। क्यों, फिरोजा !'

फिरोजा बोली—'राईट—ठीक हूं। रिहर्सल हो ही जानी चाहिए। मेरा दोस्त मुझे तंग करे तो उससे पहले ही मैं उसे लात मारकर ठीक क्यों न कर दूँ।' फिर वह विधुमुखी की तरफ मुड़ कर बोली—'अरे चुप क्यों हो तुम।'

विधुमुखी ने भर्राई हुई आवाज में उत्तर दिया...'पति से भी हम ऐसा ही वर्ताव करें क्या ?'

'क्यों नहीं ?'

'पर ?'

शिवगौरी बोली—'बस यही तो हम से गलती होती है। पति याने पुरुष वह भी तो आदमी है—जैसे हम आदमी हैं। मनुष्य-मनुष्य में अन्तर कैसा ? क्या पति आकाश से उतर कर आता है ? जब तक हम पुरुष और स्त्री की समानता

को न समझेंगी—कुछ न कर पायेंगी। पुरुष के कुछ विशेष अधिकार हैं, इसी के विरुद्ध तो विद्रोह करना है।

बीच में ही टोक कर हँसते-हँसते गंगा बहन कहने लगी—'विद्रोह, नहीं शीत विद्रोह, शीतयुद्ध।'

दोनों की बात काट कर शिवगौरी ने बेचैनी से मुँह बनाते हुए कहा—'बैठे या खड़े, सोते या जागते, हमें दृढ़ता से विद्रोह करने को तैयार होना है—फिर चाहे कितनी आपत्तियाँ आयें, हमें उनको हँसते-हँसते सहन करने को तत्पर होना चाहिए। यही तो स्त्रियों का धर्म-युद्ध है। यह धर्म-युद्ध हमें आज ही छेड़ देना चाहिए।'

फिरोजा ने टालते हुए कहा—'मैंने तो यह युद्ध कब से छेड़ रखा है।'

गंगा बहन को और मुझे यह युद्ध शुरू करने की जरूरत ही नहीं।

'क्यों ?'

इसी समय घण्टी जोर से बज उठी। थोड़ी देर में शशिकला का मोटर ड्राइवर बड़े बूटों से ठक-ठक करते कमरे में आया। सुनहरे बटनों से उसकी चमकीली वर्दी उसके रोबदौब को बढ़ा रही थी।

आते ही सलाम करके बोला—'बहन जी ! सेठ साहेब आये हैं ?'

शिवगौरी ने हँस कर शशि से पूछा—'कौन ! शशि बहन ! तुम्हारे चाचा आये हैं ?'

शशिकला ने बताया—'हाँ आये तो हैं !'

फिर ड्राइवर से बोलीं—'तुम चाचा से कहो मैं अभी आती हूं।'

शिवगौरी—(मुस्काराकर) उन्हें ऊपर क्यों नहीं बुला लेती ?'

शशिकला—नहीं ! हमें क्लब जाना है, वे मुझे लिवाने आये हैं।'

शिवगौरी ने अर्थपूर्ण मुस्कराहट से कहा—'अरे ! यहाँ आकर भी बिना चाय पिये ही चले जायेंगे क्या ?'

———

३

ड्राइवर चला गया दो शशि सोच में पड़ गई। सोचने लगी—आ पायेंगे—काका।

शायद नहीं ! उसने क्षण भर में फैसला करके खिड़की से सिर निकाल कर ताली बजाई और ऊपर आने का संकेत दिया।

स्त्री-स्वातन्त्र्य-प्रेमी सदस्यों में खलबली-सी मच गई।

शिवगौरी ने वस्त्र ठीक किये। पिरोजा ने शीशा और कंघा निकाल कर चेहरे की मरम्मत की। ओठों पर पेंट किया। विधुमुखी ने लटों को सुलझाया और देवी-गंगा ने अपना चश्मा तनिक ठीक किया।

सब ही आगन्तुक के विषय में जानना चाहती थीं। तरह-तरह के सवाल नाच रहे थे।

—कैसे चाचा हैं ?

—छोटे या बड़े !

और जब सबने सुना कि ये असल पिता के भाई न होकर व्यापार बन्धु हैं। पिताजी की मृत्यु के बाद ही पालन-पोषण का भार इन पर आया है,

तो पिरोजा ने ठण्डी आह भर कर कहा—'काश।'

'काश क्या ?'

'मैं भी तुम जैसी होती ?'

'कैसी ?'

'धनी चाचा की भतीजी !'

'बस।'

'नहीं।'

'तो फिर।'

पिरोजा ने नाक-भोंह सिकोड़ कर कहा—मैं चाहती हूं, आई विश आई हैड ए शेमफुल्ली रिच अंकिल लाइक योअरस।'*

'ओह !'

तभी सेठ के आगमन की सूचना से पूरी सभा में अजीब-सी खलबली मच गई। चाय के प्याले ओंठों के मोहताज हो गये। सबकी नजर लगी थी दरवाजे पर, जहाँ दो क्षण बाद सेठ मनहरलाल दीख पड़ा।

बड़ा ही सबल व्यक्ति था वह।

सूरती सेठों जैसी पगड़ी, बन्द कालर का काला कोट, सपेद पतलून, काले जूते—कद ऊंचा, रंग गोरा, मुख गम्भीर, आंखें विशाल और ममतामयी तथा चाल में गौरव, तेज और विनोद की झलक।

शशि ने स्वागत किया। बोली—'आओ न, यह सब तुमसे मिलना चाहती हैं।'

'अच्छा।'

शशि ने पिरोजा का परिचय कराते हुए कहा—'आपसे मिलिए मिस परोजा, द आर्टिस्ट…'

मिस पिरोजा का हाथ आगे बढ़ा। स्वर निकला—'हैलो' हाऊ डू यू डू।'

'ठीक है।'

पिरोजा इस उत्तर से कट-सी गई। बोली—'वाट (क्या)…'

'मैं तो योग मायाओं को दूर से ही नमस्कार करता हूं।'

अचानक सब हंसीं, जैसे हसने में ही सबका भला हो, फिर पिरोजा को अपने अपमान का अनुमान हुआ।

शशिकला ने शिवगौरी का परिचय करते हुए कहा—आप हैं, शिवगौरी बहिन—मोतीराम डिप्टी सुपरिंटेन्डेन्ट की बहिन, हमारे संघ की मंत्री—

---

*I wish I had a shamefully rich uuele like yours.
(तुम्हारे काका की तरह मेरा काका भी निर्लज्ज अमीर होता)।

पूछती हैं—'आपने शादी क्यों नहीं की ?

'मैंने ?'

'हाँ।'

'स्त्रियों के मूँछें उगाने का का काम करने वाला संघ पूछता है। आधुनिका से शादी करता हूं तो जानती हो वह बेचारी क्या करेगी ? अपना मुँह रँगती रहेगी, मेरे वस्त्रों की देखभाल-सँभाल करने की उसे फुर्सत ही कहां मिलेगी ? पराये पुरुषों को अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखलाकर आकर्षित करने में ही वह लीन रहेगी—मुझे खुश करने का उसे अवकाश ही कहाँ मिलेगा ? वह अपने अधिकारों की स्थापना में व्यवस्त रहा करेगी, कर्तव्यों की ओर उसका ध्यान क्यों जाने लगा ?'

पिरोजा से न रहा, गया बोली—'ओ तुम ब्रूट...'

'एकदम जंगली...'

मनहरलाल गम्भीर स्वर से व्यंग-भरे सुर में कहने लगा—

'क्यों ब्रूट कैसे ? अच्छा जो तुम्हारे मन में आए कह लो, मुझे कोई ब्याह तो करना ही नहीं।'

मनोहरलाला का आशय स्पष्ट था।

शिवगौरी तुनक गई। बोली—'सेठजी ! क्या पहले जमाने में स्त्रियाँ गहनों और कपड़ों से शरीर को नहीं सजाती थी, फिर आज की नारी पर साज-सज्जा का आक्षेप क्यों कर हो रहा है ?'

'पहले जमाने में स्त्रियाँ गहने-कपड़े पहनती थी, पर वह केवल एक पुरुष को रिझाने के लिए। सिर्फ अपने पति के लिए। उसी का दिल-बहलाव करना उनका उद्देश्य होता था; चाहे जिसका मनोरजन हो।

'पर आधुनिक नारी सिगर करती हैं, कपड़े पहनती है, वह सारे संसार को रिझाने के लिए ! मुझे तो ऐसी नारी चाहिए, जो मेरी ही संगीनी हो, मेरे ही लिए कपड़े पहने, मेरे ही वास्ते रूप का सिंगार करे। भले ही......'

शिवगौरी ने बात काटकर कहा—'मुगल बादशाहों की तरह हरम को सजाने वाली स्त्री हो, क्यों ?'

'हाँ।'

शिवगौरी की आँखे उलझ गई। दोनों ने एक-दूसरों को देखा और अनायास विधुमुखी से न रहा गया। बोली—फिर तो आप स्त्रियों के अधिकारों की बात तक भी सुनते रहे।'

मनहरलाल हँसते-हँसते बोले—'स्त्रियों के अधिकारों के बारे में सुनते सुनते मेरे कान पक गये हैं—बहरे हो गये हैं।'

'अपनी शक्तियों का यथार्थ और सही मूल्य निर्धारित करने का समान अधिकार स्त्री को है, परन्तु पुरुष की शक्तियों का अपरूप अनुकरण करने का उसे अधिकार नहीं। अधिकारों की समता के आज के नारे का यह अर्थ है कि स्त्री पुरुष से ब्याह तो करे, पर उसके लिए बच्चे पैदा न करे!'

पुरुष धन-दौलत पर स्त्री अधिकार तो करे, मनमाने ढंग से उसे खर्च करे; परन्तु पुरुष की इच्छा के अनुसार नहीं······'

पिरोजा की दृष्टि भी उठी। मनहरलाल कहता गया।

'आज की स्त्री अपने बाल-बच्चों का दूसरों से पालन करवाना चाहती हैं, स्वयं उनको पालना वह अपनी जिम्मेदारी नहीं मानती। पति को सुख देखकर वह सुख पाना नहीं चाहती। वह समझती है कि वह दुखी है और यदि वह पति को दुःख दे सके तो सफल है। ह! ह! ह! तुम्हारे जैसी आधुनिकाए तो अंगरा है, अंगारा! अपने को जलाना और दूसरों को भी जलाते रहना तुम्हारा काम है—जलाकर दग्ध करते रहना। ऐसी स्त्रियों को तो देखते ही मुझे बुखार हो जाता है। हः हः! क्यों ?

मेरे तीन आँखे और दो नाक नहीं, इसी पर कल को शशि झगड़ा खड़ा कर सकती है। सुझाव मिला तो पुराने ढंग की औरत से शादी कर लो मनहरलाल ने स्पष्टीकरण दिया।

'और पुराने ढर्रे की स्त्री को देखकर तो मुझे जाड़ा लगने लगता

है······वह गुड़िया की तरह होती है और पुरुष को भी उसे गुढ़िया की तरह रखना पड़ता है। बोलती है तो कानों के पर्दे फटने लगते हैं, चलती है तो धरती काँपने लगती है, बाल-बच्चों की सम्भाल से ही उसे फुर्सत नहीं मिल पाती कि पुरुष के पास आए।

'तेल थपथपाकर बालों की चोटियाँ सवारे वह मेरे पास आ भी गई तो बातें करते-करते उससे मेरी मूछों में जुए चढ़ जायेंगी और जरूरी काम को वह इतनी फुर्ती से कर देगी कि उसकी तुलना में यन्त्र भी अधिक मानवतापूर्ण लगेगा और मेरी अवस्था ऐसी हो जाएगी कि जैसे कुत्ते की पूंछ से ईंट बाँध दी गई हो।'

जाने क्या था इन बातों में, सब खिलखिलाकर हँस पड़ी।

शशि के भी हँसते-हँसते पेट में बल पड़ गये, बोली—'चाचा ! आपके लिए स्त्री बनाने का समय ही विधाता को नहीं मिला !'

'इसीलिए तो—मैं अब तक कुँवारा बैठा हूं।'

गंगा बहन ने सुझाव दिया—'तब तो किसी अच्छी सम्मानित प्रौढ़ा से ब्याह कर लें।'

'कर तो लूँ, मैं इसलिए नहीं करता की वह पहले दिन मुझे अपने बीते अनुभवो के किस्से सुनाने लगेगी। कहेगी—तुम्हारा यह ठीक नहीं, वह अच्छा नहीं। ऊंहूं ! प्रौढ़ा भी ठीक नहीं।'

शिवगौरी ने बीच में टाँग फँसाई, 'आप जैसे पुरुष को किस तरह की स्त्री चाहिये ?'

मनहरलाल—'समझता तो मैं भी हूं, पर ऐसी स्त्री मिले तब न, पर आप कहिये।'

शिवगौरी नयनों में मिठास भर कर दृग्बाण फेंकते हुए बोली—'आपको चाहिये प्लेटोनिक लव—अफलातूनी प्रेम—वासनाहीन उन्मुक्त प्रेम ही एकमात्र उपाय है। देह-वासना से रहित प्रणय—ठीक है न ?'

मनहरलाल ने उँह करके गर्दन हिलाई।

मिस पिरोजा ने चिढ़कर कहा—'तुम्हें कोई खुश नहीं कर सकती। किसी स्टेचू से शादी करो—पत्थर की मूर्ति से जो तुम्हारे मन के अनुसार बनी हो।'

विधुमुखी जो अब तक चुप थी, पर अब बोली—'सेठ ! यदि तुम शादी नहीं करोगे तो तुम्हारे इतने धन-दौलत का क्या बनेगा ?'

मनहरलाल ने बतलाया वह वसीयत कर जायेगा कि उसकी मौत के बाद कुँवारों के लिये एक होटल खोल दिया जाये। जिसको भी अपने मन के अनुकूल स्त्री न मिल सके वह उस होटल में आ कर रहे और आनन्द मनाये।'

सबकी सब आश्चर्य चकित रही।

मनहरलाल कुरसी से उठकर चलने के लिए तैयार हो गया। जाते-जाते बोला—'तुम लोग जिन अधिकारों के लिए संघर्ष कर रही हो, वे जब प्राप्त हो जायेंगे तो संसार चलेगा—खूब चलेगा। अच्छा चलता हूं ····बहुत देर हो गई है ! चलो शशि ! चल रही हो न ?'

आँखें नचाते हुए शशि प्रत्युत्तर में बोली—'आज तुमने हमें······स्त्री जाति को इतनी गालियां दी हैं कि मैं सोच रही हूं कि मुझे तुम्हारे साथ जाना भी चाहिये या नहीं

स्नेह से हँसते हुए मनहरलाल बोला—'चलो तुम मोटर में बैठे-बैठे चाहे जितनी गालियां दे लेना······बदला उतार लेना।'

शिवगौरी उठ खड़ी हुई और मनहरलाल की ओर प्यार भरी नजर से देखती हुई मुस्कराकर बोली—'मैं भी संग चलूँ ? कोई आपत्ति तो न होगी ?'

मनहरलाल ने सव्यंग्य कहा—'शशि ! मिस पिरोजा और गंगा-बहन को भी ले जाओ।'

शिवगौरी ने कहा—'क्यों, क्या आप नहीं चलते ?'

मनहरलाल—'नहीं। मैं पैदल ही आ जाऊँगा।'

शशिकला मुस्कराकर बोली—'अच्छा, उनको पहले निर्णय कर लेने

दो, कौन चल रहा है और कौन नहीं ।'

मनहरलाल -- '(व्यंग्य सहित) स्त्री को मर्दाना बनाने वाली इस सारी सभा को मैं कहां ले जाऊँ ? शशि ! तुमको जाना हो तो जाओ ।'

पिरोजा—'सेठ ! मेरी टू सीटर है, आओ तुम मेरे साथ चलो ।'

मनहरलाल बोला—'नौ थैंक्यू । (नहीं धन्यवाद)

शशि मुस्कराई—'हः हः हः हः ! मैं, चाचा और विधु वहन चलते हैं, आप सब यहीं बैठें ।'

मनहरलाल—'मै आशा करता हूं कि तुमसे कोई बुरा न मानेगी । शशि ने ठीक ही कहां कि मैं नारी जाति का शत्रु हूं। मुझे यहां बुलाना उचित न था ।'

शिवगौरी बोली—पर हम तो परिवर्तन में विश्वास करते हैं । एक दिन हम आपको अपने पक्ष में कर के ही छोड़ेगी । घबराओ मत !'

मनहरलाल ने दीर्घ श्वास ली—क्या जाने फिर मेरा क्या बनेगा । अच्छा चलता हूं । जय-जय······'



४

मनहरलाल चला गया । परन्तु उसकी हँसी, उसके व्यंग्य, उसके कटाक्ष अब तक कमरे में गूँज रहे थे । सभी उसकी उक्तियो को पहचाने में लगी हुई थी ।

शिवगौरी ने इस मौन को भंग किया । कसा—'शशि बहन ! कल घर पर मिलोगी न !'

शशिकला—'अवश्य·····अवश्य आना बहन !'

यह कहकर शशि विधुमुखी को साथ लेकर चली गई ।

पिरोजा ने द्वार की ओर देखते हुए कहा—'वाट एन ईडियट !'

शिवगौरी ने बात काटते हुए कहा—'ईडियट ! क्यों ?······इसका बोलने का तरीका कितना अच्छा हैं ! होगा स्त्री शत्रु ही, पर कैसा विनोदी स्वभाव का है !'

गंगा बहन—'धनी है, इसीलिए इतनी बातें सुनती रही, नहीं तो ऐसी खरी-खरी सुनाती कि······कि'

शिवगौरी—'और वह एक की चार सुना देता···तब ?'

पिरोजा—आल राईट। अब चलें। गंगा थेंक्यू ! शिवगौरी गुड आफ्टर नून।'

शिवगौरी ने धड़कती छाती से खिड़की की ओर देखा। मनहरलाल कार में सवार हो गया था। शिवगौरी ने अस्फुट स्वर मे कहा—वाट ए वन्डरफुल मैन ! कितना मीठा······कितना अच्छा ! ऐसे व्यक्ति से मेरा प्लेटोनिक लव—अफलातूनी प्रेम हो जाये तो जीवन का मजा आ जाये !'

मेरा आईडियल है, प्लेटोनिक लव—अफलातूनी प्रेम—उन्मुक्त प्रेम, बासनाहीन प्रेम। दोनों की आत्मा की एकता, फिर भी दोनों स्वतन्त्र। आत्मा आत्मा में लीन हो जाये······फिर भी। फिर भी उन्मुक्त······उसमें मेरा-तेरा का भेद न रहे—पर एक दूसरे की पराधीनता का बन्धन न हो···विवाह का पूरा आनन्द, पर ज़िम्मेदारी नहीं।

शिवगौरी शृंगार मेज के सामने जाकर शीशे में अपने बाल और वस्त्र ठीक करने लगी। फिर स्वयं ही भीने-भीने आनन्द की तरंगों में बहती हुई बुदबुदाई···—ओह !'

'प्लेटोनिक लव····· एक दूसरे के आलिंगनपाश में बंधकर भी उन्मुक्त। आध्यात्मिक रूप में एक दूसरे से आबद्ध। जया और जयन्त की तरह शुद्ध और सात्विक प्रेम की रस भरी बेल···।'

शिवगौरी भावना-विभोर होकर, तन-मन की सुध भूल कर अपने आप में खो गई। इसी समय जोर से घण्टी चिल्ला उठी। शिवगौरी ने चौंक कर

कहा—'यह कौन मुआ आ टपका ? दो मिनट चैन से नहीं बैठने देते।······ रामा ! देखो तो बाहर कौन आया है ? आया था दुर्लभराम।'

दुर्लभराम ऊँचे-लम्बे कद का दुबला-पतला बूढ़ा था। भयानक आँखें, लम्बी-लम्बी गलमुच्छें, उसकी डरावनी आकृति को और भयंकर बनाती थी। अकड़ कर लाठी टेकते हुए वह कमरे में आ पहुंचा और लाठी रखकर बैठते हुए क्रोध से बोला—'क्यों लड़की ! क्या यह सारी फ़ौज तेरे यहीं से उत्तरी है ? ये चारों चोटियाँ यहीं खड़ी हुई थीं ?

शिवगौरी नखरे से बोली—'हाँ चाचाजी ! तुम्हें इससे मतलब ?'

दुर्लभराम.ने लाठी पकड़ कर एक-एक शब्द चबाते हुए कहा—'हैं ! मुझे उससे कोई मतलब नहीं। तेरे पिता का मान मिट्टी में मिलें तो मुझे कुछ नहीं। क्या मेरा भाई नहीं लगता ? रे लड़की ! बोल······यह चाल-ढाल कब छोड़ेगी तू ? कब जायेगी तू अपनी ससुराल ? असली मतलब की बात कर मुझसे ?'

यों कहकर दुर्लभराम ने इस तरह आंखें निकाल कर शिवगौरी की ओर देखा कि जैसे उसे खा जायेगा।

शिवगौरी उसके सामने की कुर्सी पर धम्म से बैठ गई और कुर्सी पर जोर से हाथ मारते हुए बोली—'चाचा ! हाथ ज़ोड़ती हूं···मैं पहले ही मर रही हूं, मुझे और क्यों मारते हैं ?'

दुर्लभराम ठठाकर हँसा और बोला—'हाँ, बहुत मरी हुई है, अरे मैं तुझे जानता नहीं क्या ? चार शेरों के बराबर फूल रहीं है और कहतीं है—'मैं तो मरी हुई हूं।' हूं ! हूं ! पाँच बरस तक मैं रंगून में रहा, इसलिए यह सब खुराफात चलती रही—अब यह सब नहीं चलेगा। बोल···बोल, ससुराल कब जा रही है ? और बातें पीछे होंगी।'

शिवगौरी ने आँखें निकालते हुए प्रत्युत्तर दिया — 'तुमसे मतलब ! जब मेरे मन में आयेगा जाऊँगी···और···और···नहीं आएगा तो नहीं जाऊँगी।

मैं किसी की क्या लौंडी हूं ?…'

दुर्लभराम के क्रोध का ठिकाना न रहा। दाँत पीसते हुए और लाठी को फर्श पर पीटते हुए कहने लगा—'गुलाम ? हाँ तू गुलाम है…साढ़े सत्रह सौ और सात बार गुलाम है। अरे ! तू औरत है या बन्दूक ! ……गुलाम ! अरे तेरी मैया ससुराल गई थी या नहीं और……और तेरी दादी तो शायद कुंवारी ही मर गई थी ! अच्छा, देख अब मैं बम्बई आ पहुँचा हूं। अब देखता हूं तू कैसे ससुराल नहीं जाती। चल जल्दी कर, नहीं तो कान से पकड़ कर ले जाऊँगा और तुझे वहाँ छोड़ आऊंगा।……वह इन्द्रजीत भी मुर्दा, नामर्द और कायर निकला। नहीं तो औरत जात को आजाद घूमने देता ? उसके हाथ में तो इतनी भी शक्ति नहीं कि छुरी लेकर रूठी राँड की नाक ही काट डाले !'

शिवगौरी की आँखों में आँसू आ गए। रुमाल से उन्हें पोंछती हुई कहने लगी—

'हाँ नाँक काट डाले…काट डाले…बेशक काट डाले…सड़क पर पड़ी हूं न?…'

घन्टी की आवाज सुनकर शिवगौरी ने आवेग सँभालते हुए कहा—'चाचा ! देखो कोई आया हैं।'

दुर्लभराम ने अकड़ते हुए कहा—

…'आया है तो आता रहे मुझे इससे क्या ? क्या मैं किसी के बाप का दिया खाता हूं ? मैं किसी से नहीं डरता।'

मोतीराम ने कमरे में प्रवेश ही किया था कि चाचा ने सीधा आक्रमण करते हुए कहा—'चल-चल; तू भी आया है।'

फिर सँभल कर कहा—'चलो अच्छा है तू भी आ गया। बैठ रे मोती ! अरे यह क्या किस्सा है ? इस लौंडिया को ससुराल क्यों नहीं जाने देता रे !'

मोतीराम ने कमर की बैल्ट ठीक करते हुए उत्तर दिया—

'चाचा ! तुम्हें क्या पता''' वह कुत्ता किस तरह का जीव है'''मेरे सामने उसका नाम न लो । मैं तो समझता हूं कि मेरी बहन विधवा हो गई है। उस कुत्ते के यहाँ इसे न भेजूँगा'''कभी नहीं'''

दुर्लभराम ने क्रोध से तमतमाकर आखें निकालते हुए कहा—'हाय राम ! विधवा !'''''''यह विधवा है ! तो भतीजे ! इसने यह चुटिया क्यों सजा रखी है ? यह बिन्दी क्यों लगाई हुई है ? जा बुला ला नाई को और इस राँड का सिर मुडा दे ! अरे इसका मर्द तो अभी बारह ब स का लगता है। तुम्हें शरम नहीं आती। तुमने सिर से लोई उतार दी है; पर बाप-दादों की इज्जत का भी कुछ ख्याल है ? तेरे जैसों की पंचायत अब न चलेगी। अब मैं आ गया हूं,'''देखता हूं'''

मोतीराम—'चाचा, तुम उस नीच कुत्ते को नही जानते। बड़ा ही खराब आदमी है वह'''

दुर्लभराम—'खराब ! कैसा खराब ! मर्दों जैसा मर्द है। तुम्हारे कहने से खराब हो जायेगा।

मोतीराम—'बेचारी गौरी को तंग करके जान ले ली'''

दुर्लराम—'''जान ले ली ! कहाँ'''साँस तो चलती है, बोलती है, चलती है'''देखती है'''

मोतीराम—'मुझसे इसका सन्ताप नहीं देखा जाता। बेचारी सवेरे उठती ·'

दुर्लभराम—'सवेरे तो मैं भी उठता हूं'''

मोतीराम—'पानी भरती'''

दुर्लभराम—'मालिक के घर का ही तो भरती'''

मोतीराम—(बेचैनी से)''''''उसका क्या करे ? पानी भरवाता है' खाना पकवाना गुलामी कराना'''मानो वह बड़ा बादशाह हो। मेरी बहन पानी खींचकर लाये तो वह नहाये, और पटरा बिछाये तो वह खाना खाये—'

दुर्लभराम—क्रोध में काँपते हुए बोला—

'हूं ! तेरी बहन तो रानी है अरे मालिक के घर पटरा नहीं बिछायेगी ? मर्द पानी माँगे तो उसे नहीं देगी ? वाह !'

शिवगौरी सिसकने लगी । बोली—'मार-मार कर मेरे प्राण ले लेगा···'

दुर्लभराम—'झूठी कहीं की······मारता कब है ? तेरे प्राण ले लेगा······ऐसे प्राण लेता तो अब तक तेरे प्राण बचते नहीं······तूँबे जैसी लाल तू ही तो हो रही है ! अरे ! तेरा आदमी तुझे नहीं मारेगा तो और कौन मारेगा ?'

'वह तो बुजदिल है, बुजदिल···मेरे जैसा मर्द हो न औरत की नाक ही काट देता !'

'बस चाचा ! बहुत हो चुका । मेरी बहन उस कुत्ते के घर हर्गिज न जायेगी !

—कभी नहीं···'

शिवगौरी ने त्रिया चरित्र का आश्रय लेकर सिसकना शुरू कर दिया । पर दुर्लभराम पर उसका कुछ भी असर न हुआ । वह लाठी का सहारा लेकर उठ बैठा और कड़कते हुए कहने लगा—देखता हूं कैसे नहीं जाती ? जीती नहीं छोड़ूँगा—जान ले लूँगा ।'

इतने में कुन्दनलाल वकील आ पहुंचे । दुर्लभराम वकील साहब से बोला—'अरे भाई ! तुम भी किस तरह के आदमी हो ? वकील होते हुए भी ठीक सलाह नहीं देते ?'

सुन्दर योरोपीय वेषभूषा में सुसज्जित साधारण कद के इस पैंतीस वर्षीय नवयुवक ने सुन्दर ऐनक में से तीनों को देखते हुए और अपनी घड़ी की चैन पर हाथ रखते हुए कहा—

'क्या बात है, दुर्लभराम जी ?'

दुर्लभराम—'कुन्दन ! बरसों बीत गए—पर यह लड़की सुसराल

की तरफ मूँह नहीं करती……कोई बात है ? यह भी कोई इन्सानियत है ?

कुन्दनलाल—बोला 'चाचा ! समाज का सारा ढाँचा ही बिगड़ गया है । तो जिसके जी में जो आये सो करे, हम तुम इसमें क्या बना बिगाड़ सकते हैं ? तुम्हीं बताओ—क्या कर सकते हैं ?'

'क्या कर सकते हैं, मैं क्या कर सकता हूं ? क्या करूँगा ?·· जानते हो ? तुम सबने तो चूड़ियाँ पहन रखी हैं। तुमको तो कुछ उपाय नहीं सूझता। अरे ! मैं तो इस लौंडिया को चोटी से पकड़ कर सुसराल छोड़ आऊँगा । मरना है तो कुल्टा अपने घर में जा कर मरे ।'

कुन्दनलाल ने हँसते हुए कहा—'चाचा ! वे दिन तो लद गये ।'

दुर्लभराम ने गर्दन हिलाकर कहा— नहीं देखता हूं···'

कुछ बुड़बुड़ाता हुआ दुर्लभराम द्वार की ओर चला ।

कुन्दनलाल ने शिवगौरी से पूछा—'विधु यहाँ नहीं है ? मैं तो समझता था वह यहाँ ही होगी । शिवगौरी ने प्रत्युत्तर दिया कि वह शशि के साथ बहुत देर की चली गई है ।'

कुन्दनलाल ने कहा—'तब तो क्लब गई होगी ।'

दुर्लभराम ने मुड़कर खिलाखिलाकर हँसते हुए ताना कसा—'जाओ बेटे ! अब दिया लेकर घर-घर औरत को ढूँढते फिरो । और वकील साहब आप मेरे साथ चलो ।'

कुन्दनलाल मोतीराम और शिवगौरी को अभिवादन करके दुर्लभराम के साथ सीढ़ियों तक आये तो शिवगौरी ने ठण्डी साँस भरते हुए कहा—'हे मेरे भगवान् ! मुझे इस त्रास से छूटकारा मिला ।'

मोतीराम ने बहन की बात का समर्थन करते हुए कहा—'भगवान् मुझे भी इस मुसीबत से छुड़ा ।'

शिवगौरी ने जल कर क्रुद्ध होकर कहा—'तुम्हारे क्या आग लग रही है ?'

——

५

शिवगौरी का पति है—इन्द्रजीत······

एक स्कूल मास्टर। जहाँ रहता है वह चार कमरों का घर है, जिसमें उसका एक ड्राइंग रूम है। वहीं एक लिखने की मेज है। चार कुरसियाँ, एक आरामकुरसी है। कमरा इतना छोटा है कि इतने ही सामान से भरा-भरा लगता है। मेज़ पर एक छोटी-सी टाइमपीस घड़ी का डिब्बा रखा हुआ है। कौने में एक लाल गिलाफ चढ़ा तंबूरा, रैक में कुछ एक पुस्तकें रखी हैं। आरामकुरसी पर बैठा छोटे-से, सूखे शरीर वाला इन्द्रजीत ज्वर-पीड़ित है। आँखों पर ऐनक लगी और टाँग पर टाँग रखे वह गीता के शाँकर भाष्य का अध्ययन कर रहा है।

छोटी-छोटी आँखें उसके चेहरे को निष्प्रभ बनाये हैं। उसके ओंठ पतले हैं जिनको देखकर मुख से आप ही आप निकलता है—'बेचारा'। उसकी बोली प्रभावहीन और हँसी मधुरता से रहित है। मलमल का कुर्त्ता और धोती पहने और मस्तक पर भस्म रमाये, लम्बी शिखा धारण किए वह पूरा भगत-सा' दीख पड़ता है।

एकाएक गंगा बहन आई, उसके पास आकर बैठ गई, उसके हाथ में भी गीता थी। प्रशंसा-भरी दृष्टि से इन्द्रजीत की ओर देखती हुई बोली—'कहिए मास्टर साहब, कौन-सी पुस्तक के अध्ययन में व्यस्त हैं ?'

'शांकर भाष्य।'

पुनः प्रश्न हुआ—'क्या आज रसोइया खाना पका गया है ?'

'हाँ !'

गंगा बहन ने पुस्तक उठाई और पूछा—'बताओ तो आज मैं किस से मिल कर आ रही हूं, ज़रा अनुमान लगाओ न।'

इन्द्रजीत ने ठण्डी साँस भरी बोला—'अनुमान तो मैं लगा सकता हूं।'

गंगा बहन बोली—'भाई वह बहुत ही शरारती है। पूरी शैतान है।'

'हूं !···हाँ बहन !'

'मैंने आज गुलगुले बनाये हैं, भेजूँ ?'

'अच्छा भेज देना।'

'तुम्हें अब उस स्त्री की आशा छोड़ देनी चाहिए।'

इन्द्रजीत (ठण्डी साँस लेकर पुस्तक पढ़ते हुए बोली) 'मैंने तो जीवन की आशा भी छोड़ दी है।'

'सच।'

'हाँ···'

एक गहरे निश्वास के साथ इन्द्रजीत का मुँह बन्द हो गया। बन्द ही रहता अगर गौरीशंकर वहाँ उपस्थित न हो जाता।

गौरीशंकर है कवि। पर अगर पहलवान कहा जाए तो और भी ज्यादा उपयुक्त रहेगा। सशक्त और कद्दावर इन्सान, चौड़े माथे और गहरी आँखें लिए उसका मुँह अभिमान से दीप्त रहता है। आते ही उसने अपनी नई कविता 'आरती' की माँग की।

उत्तर मिला—'अभी तो मैं पढ़ भी नहीं पाया हूं।'

'क्या ?'

'अभी नहीं पढ़ी, भाई !'

'पर मुझे तो देनी थी ?'

'किसे।'

'शशि को ?'

'शशि !'

'हाँ शशि···वह नीचे खड़ी है।'

'पर यह है कौन ?'

गौरीशंकर ने क्रोध की मुद्रा फुलाते हुए कहा—'तुम शशि को नहीं जानते। एक ऐसी जानी-पहचानीं भव्यमूर्ति जो देखने-दिखाने योग्य हो उसे आप······।'

गंगा बहन ने पूछा--'क्या वह यहीं है ?'

'हाँ।'

'तो बुलाओ न !'

'पर आपके पास यह कैसे आये ?'

'कैसे।'

'हाँ बतलाओ तो।'

'शशि !'

'सो तो मैं जानतौ हूं कि शशि···'

गौरीशंकर को ताव आ गया, बोला—फिर।'

'आपका सम्बन्ध कैसे हुआ ?'

इन्द्रजीत ने गहरी साँस ली, फिर पूछा—धनी भी है ?'

गौरीशंकर—बहुत धनाढ्य है। उसके चाचा धनी सेठ हैं। चाचा की धन-दौलत इसे ही विरासत में मिलेगी—उसके और कौन हैं ?'

इन्द्रजीत ने कविता गौरीशंकर के हाथ में पकड़ दी।

उसी क्षण गंगा एवं शशिकला आ धमकी। इन्द्रजीत ने हाथ में अपनी पुस्तक ले ली और गौरीशंकर की मुसकान से विकसित हो गई।

इन्द्रजीत ने 'आओ बहन' कहकर शशि का स्वागत किया।

गंगा बहन न परिचय करते हुए कहा—'शशि बहन ! ये है शिवगौरी के पति मास्टर इन्द्रजीत जी।'

इन्द्रजीत ने शिवगौरी का नाम सुना तो निष्प्रभ हो गया।

शशिकला ने अभिवादन करते हुए इन्द्रजीत की कुशलता पूछी। और कहने लगी--'गोरीशंकरजी ने कई बार आपकी चर्चा की है।'

गर्व-भरे स्वर में गौरीशंकर ने उत्तर में कहा—‘इसने कौमार्य-व्रत ग्रहण किया हुआ है।’

गौरीशंकर कवि के स्वर में श्लाघा अधिक थी। कवि अपनी प्रेरणा से सजाता है, संवारता है, पर जब वह मस्तिष्क की बजाय दिल से काम लेना शुरू करता है तो उसकी वंचकता जाग उठती है। उसका दुलार मर जाता है, उसकी काचलता जाग उठती है।

और कवि गौरीशंकर भी रसलोलुपी है। उसमें रस नहीं, रसिकता है, प्यार नहीं, वासना है। पर साथ ही कविताओं में ऐसी लारानी है, जो लड़कियों की भावनाओं को उभार सकता है, प्यार के स्थान पर दुलार नहीं, वासना को जन्म देता आया है।

शशि आई, और आकर स्थिर हो गई। शशि जो एक अविकसित कली थी, अचानक इस भंवरे के जाल में आकर फंस गई थी।

आते ही शशि ने कहा—‘हैलो।’

‘हैलो।’

‘कैसे हो?’

मलीन मुस्कान से इन्द्रजीत ने उत्तर दिया—‘अच्छा हूं, धन्यवाद! आज आपके आने से मेरा घर पवित्र हो गया—आज तो चींटी के घर भगवान् आगए!’

गौरीशंकर ने व्यग्रता से अपना काव्य शशि की ओर बढ़ाते हुए कहा—‘शशि, यह देखो, यह है मेरा वह काव्य।’

शशिकला हँसकर बोली—‘ओ! ‘प्रियतमा की आरती!’ इसी तरह लिखते रहोगे तो कभी बड़े-बड़े कवियों का मुकाबला करने लगोगे।’

‘गंगा बहन जानती हो—गौरीशंकर महान् कवि हैं—सुन्दर लिखते हैं, अति सुन्दर।’

श्लाघा के कारण गौरीशंकर के मुख पर मुस्कान-भरी लालिमा दौड़ गई।

गंगा बहन ने कहा—'ये कवि हैं, यह तो मैं जानती हूं, परन्तु इनकी कोई रचना पढ़ने का अब तक मुझे अवसर नहीं मिल पाया।'

ऐनक को साफ करते हुए इन्द्रजीत ने कविजी को तथा शशि को बैठने का आग्रह किया।

शशि बहन शिवगौरी की चर्चा छेड़ बैठी, कहने लगी, 'परसों मैं शिवगौरी से मिली थी।। ऐसी भी क्या बात है, आप उनको घर क्यों नही लाते? यह तो अनुचित है।'

इन्द्रजीत का मुख निष्प्रभ हो गया। उसने दृष्टि नीचे कर ली।

गौरीशंकर ने इन्द्रजीत का डिफेन्स पेश करते हुए कहा—'शशि, यह तो बड़ा पुराना किस्सा है। हम भी इनसे कई बार कह चुके हैं कि शिवगौरी को बुला लें।'

स्नेह भरी दृष्टि से शशिकला बोली—'यदि आप जैसे सुशिक्षित व्यक्ति इस प्रकार पत्नी को त्याग देंगे तो फिर शिक्षा का लाभ ही क्या हुआ? पढ़े-लिखे लोगों को तो स्त्री जाति के सम्मान की रक्षा करनी ही चाहिये।'

इन्द्रजीत को रुलाई आ गई, जिसे उसने बलपूर्वक रोका और फिर ठंडी साँस लेकर कहा—'मैंने कब इन्कार किया है...'

गौरीशंकर कहने लगा—'मास्टर साहब! इस तरह नहीं चलेगा। आप स्वयं जाकर इन्हें लिवा लायें।'

सोचते ही सोचते कितने वर्ष बीत गये—'अब आपको कुछ कम करके दिखलाना चाहिये।'

छोटी-छोटी आंखों को तेजस्वी बनाने का प्रयत्न करते हुए इन्द्रजीत ने प्रत्युत्तर दिया—'उन्हें किसी दिन ले आऊँगा।' परन्तु उसके वेदनापूर्ण नेत्रों और ठंडी निःश्वासों से प्रगट हो गया कि वह शिवगौरी के सम्मुख जाने की सामर्थ्य नहीं रखता।

शशिकला ने चोट पर मरहम रखते हुए कहा—'भला कहीं हिन्दू नारी पति के साथ जाना अस्वीकार कर सकती है? तुम पुरुष लोग स्त्रियों के हृदयों को प्रसन्न करना नहीं जानते। उनको सन्तुष्ट करना तुम्हें आना चाहिये।'

गौरीशंकर ने शशि का समर्थन करते हुए कहा—'शशि ! तुम ठीक कहती हो। प्राय: देखा जाता हैं कि पुरुष नई-नई स्त्री के मन की भावनाओं को समझने का प्रयत्न नहीं करते।'

गंगा बहन बोली—'भला कारण बिना भी कहीं कार्य होता है ?'

शशिकला ने वाणी में आग्रह भर कर कहा—'मास्टर साहब मेरी बात मानो, बीती बातों को भूल जाओ और बहन शिवगौरी कोसमझाने का काम मेरे ऊपर छोड़ो।'

इन्द्रजीत ने असमर्थता भरे स्वर में कहा—'मुझे कहीं इन्कार है ?' क्यों कवि जी ! मैंने कभी मना किया है ?'

गौरीशंकर ने इन्द्रजीत को सान्तवना देते हुए कहा—'मास्टर ! तुम निश्चिन्त रहो। शशि जो ठान लेती है, उसे करके ही छोड़ती है। इनमें दैवी प्रेरणा-भक्ति हैं। तुम नहीं जानते—'शी इज ए इनसपायर्ड गर्ल।'

गंगा बहन ने सव्यंग कहा—'कहीं ऐसा नहीं कि पेट मलने से पेट दर्द उठ खड़ा हो……'

शशिकला ने सिर हिलाते हुए कहा—'नहीं बहन ! तुम ऐसा मत कहो। ऐसा कभी न होगा। प्राय: लोग गलतफहमी के कारण एक-दूसरे के दुश्मन बन जाते हैं। आज ही सांझ के समय शिवगौरी मेरे पास आयेगी। कवि जी, आप भी आना।'

फिर मास्टर जी की तरफ उसने ताका और कहा—'स्त्रियों की भावनाओं को समझाने का यत्न कीजिये……'

दर्द भरे स्वर में इन्द्रजीत बोला—'बहुत यत्न कर चुका हूं…… पर……,

शशिकला ने समझाते हुए कहा—'नयी व्याहताओं के हृदय जिस तरह नये होते हैं, उसी तरह उनकी इच्छायें भी नई होती हैं। उनको आत्मिक स की आकांक्षा रहती है। पुरुष इस ओर ध्यान नहीं देते। बस ! इतनी-सी बात पुरुष समझ जाएं तो बहुत से झंझट दूर हो जायें'

इसके बाद उसने विदा ली, और चली गई। पर तभी वह लौट आई। सामने से कोई महापुरुष चले आ रहे थे।

६

आगन्तुक थे दुर्लभराम वल्लभराम।

वल्लभराम भारी-भरकम शरीर का ठिगना-सा काला व्यक्ति कम बोलता है; पर घूर-घूर कर देखने का उसका स्वाभव है। गाल मे पान की गिलौरी ठूंसे से घूरता घूरता चलता है।

दुर्लभराम ने आते ही प्रश्न किया—'इन्द्रजीत ! यह सब कौन महाराज हैं ?'

इतना कहकर वह बारी-बारी से सबको घूर-घूरकर देखने लगा। वल्लभराम चुपचाप खड़ा इन्द्रजीत की ओर घूर रहा था।

दुर्लभराम ने प्रश्नसूचक दृष्टि से देखते हुए पूछा—'ये कौन है ?' यह देवी कौन है ?' इतना कहकर उसने दृष्टि शशिकला की ओर घुमाई।

इन्द्रजीत ने आदर से कहा—'आओ जी दुर्लभराम जी आइये।'

दुर्लभराम ने शब्दों को पीसते हुए पूछा—'ये देवी जी कौन हैं ? मैंने कहा…'

इन्द्रजीत प्रश्न का अर्थ समझकर कांप उठा। ऐनक उतार कर रूमाल से पोंछते हुए उत्तर देने का प्रयास करने लगा; 'परन्तु ये, ही कह सका और शब्द उसके गले में ही अटक गये।

शशिकला ने इन्द्रजीत को बताना उचित समझा और पुनः प्रश्न किया—'क्यों ? मुझसे आपको कुछ काम है ? अच्छा नमस्कार'

इतना कहकर शशिकला जाने को उद्यत हुई। दुर्लभराम बैठ गया और वल्लभराम मेज के कागजों को उलट-पुलट कर देखने लगा।

गौरीशंकर ने वाणी में मधुरता भरकर कहा—,शशि मैं आज सांझ के समय आऊँगा ।

'अवश्य आना ।'

दुर्लभराम, जो शशि की करारी बातचीत से कुछ झेंप-सा गया था, फिर तेज हो गया और बोला—'अबे ओ मास्टर ! इधर तो आना जरा । इस तरह खुशी से फूले जा रहे हो—'क्या बात है ? यह औरत कौन है ?'

गौरीशंकर से न रहा गया । उसके मुंह से हठात् निकल गया—**Mind your own business**—अपना काम कर बे ! इस तरह बड़बड़ाता हुआ वह चला गया ।

गंगा बहन बोल उठी— 'भाई···।'

बीच में काटते हुए दुर्लभराम ने कहा—पर पहले यह तो बताओ कि तुम हो कौन ?,

गंगा बहन चिढ़ गई 'और मैं जाती हूं' कहकर चली गई ।

दुलंभराम ने बल्लभराम के कन्धे पर जोर से हाथ मारकर कहा—'हाँः हांः हाँः चले गए···सब चले गये ! भाई बल्लभराम !' सब चले गए ! हः हः हः···'

बल्लभराम खीझकर बोला—दुर्लभराम, मतलब की बात करो । बेकार ··'

दुर्लभराम बोला—'देखो इन्द्रजीत ! हम तुमसे एक खास बात करने आये हैं । तुम्हारे परिवार में भाई बल्लभराम और शिवगौरी के कुटुम्ब में बड़े बुजुर्ग हैं । हम तुम्हारा फैसला करने आये हैं । बोल तू किस तरह फैसला करना चाहता है ? बोलो बल्लभराम, अब चुप क्यों हो ।,

बल्लभराम ने पान चबाते हुवे कहा, हाँ भाई दुर्लभराम ठीक कहते हो ।'

इन्द्रजीत—'पर मैं पूछता हूं फैसला किस बात का ?'

दुर्लभराम तुनककर बोला—'किसका ? किसका ? ···अरे तेरा और शिवगौरी का । और किसका, हूं जैसे जानता ही नहीं ।'

इन्द्रजीत ने विवशता की साँस लेकर कहा—'पर···पर मैं क्या कर

सकता हूं ?'

दुर्लभराम—'तू न करेगा तो कौन करेगा ? जोरू तेरी है या···क्यों भाई वल्लभराम, अब तुम चुप हो ?'

'इन्द्रजीत बोल अपनी औरत को कब लेने जा रहा है ? साफ-साफ कह ।'

'पर मैंने मना ही कब किया है ?'

'तू ने नहीं तो फिर किसने मना किया है ?'

इन्द्रजीत का स्वर क्षीण हो गया। बोला—'वह इन्कार करती है। मैं तो कुबड़ी बुआ से कहला चुका हूं। गंगा मौसी को भेज कर देख चुका हूं, वह अब भी···'

दुर्लभराम—'ठीक ! वह नहीं आयेगी तो क्या तू चुप बैठा रहेगा ?'

इन्द्रजीत—'तो क्या करूँ ?'

दुर्लभराम—'(एक-एक शब्द को पीसते हुए) 'हूं ! तब क्या करूँ ? अरे उसे चोटी से पकड़ कर क्यों नहीं घसीट लाता ? तू मर्द है या औरत ? मर्द आंख टेढ़ी करके देखे तो औरत आगे-आगे चली आए। क्यों भाई वल्लभराम ! अब चुप क्यों हो ?'

वल्लभराम—'हां भाई दुर्लभराम ! बिल्कुल ठीक है।'

इन्द्रजीत—'पर···पर श्रीमान् जी ! वह बार-बार इन्कार करती है, आना ही नहीं चाहती, इसका क्या इलाज है ?'

वल्लभराम—'वाह रे ! तूने मर्दों का नाम डूबो दिया। कायर ! नामर्द !'

वल्लभराम के इस तरह एकाएक बोलने से इन्द्रजीत चकित हो उठा और झेंपकर कुर्सी में धस गया।

दुर्लभराम बोला—'पूरे पांच बरस बीत गए और तेरी स्त्री घर नही आई ! तू आराम से पड़ा है ! अरे सीधी तरह नहीं आती तो टेढ़ी तरह से ला। तने तो मर्दों की जात को शर्मिन्दा कर दिया। कोई बात है ?'

वल्लभराम—'मेरा भाई बैठा झींक रहा है···'

दुर्लभराम—'और मुझे कितना अपमान सहना पड़ा है, । क्यों बल्लभ भाई ! अब चुप क्यों हो ?'

बल्लभराम—'बिल्कुल ठीक है।'

इन्द्रजीत इस समय पसीने से तरबतर हो रहा था। इस तरह से उसे अभी तक किसी ने न नापा था। क्या वह सचमुच बेकार है ? क्या स्त्री को बलपूर्वक वश में करना चाहिए ? क्या सचमुच सीधी ऊंगली से घी न निकले तो टेढ़ी उंगली से निकालना चाहिए ?—इसी तरह के विचार उसके मन में चक्कर काट रहे थे।

हथौड़े की चोट की तरह कठोर आवाज में दुर्लभराम बोला—'अरे' तू कमर बांध कर तैयारी कर लें। देख, कैसे वह नहीं मानती।'

इन्द्रजीत ने भारी-सी आवाज में प्रत्युत्तर दिया—'क्या खाक तैयार हो —तुम्हारी मरियल आवाज ही बता रही है कि तुम कहां तक तैयार हो ! अरे कायर ! उठ ! क्या आराम से बैठा है ? अरे तेरी जोरू तेरा कहा नहीं मानती तो जा, जाकर उसे ज़बर्दस्ती उठा ला।'

इन्द्रजीत—'अगर वह न आई तो ?'

दुर्लभराम—'कहा तो है, उसे उठा ला। तांगे या मोटर में डालकर घर ले आ और कमरे में बन्द करके बाहर से ताला जड़ दे। क्या ख्याल हैं, बल्लभ भाई ! अब चुप क्यों हो ?'

बल्लभराम—'बिल्कुल ठीक है, भाई दुर्लभराम ! इसमें क्या शक है?'

दुर्लभराम—अरे भुड्डू ! कुछ समझा ? उसका अपहरण कर ला !

इन्द्रजीत—'और अगर फिर चली गई तब ?'

दुर्लभराम—'जा कैसे सकती है ? उसकी ताकत है ?'

'किसकी ताकत है कि फिर चली जाय ?'

'किसकी ताकत है फिर···'

'फिर के बच्चे ! फिर···फिर क्या ?'

'और उसका भाई फौजदारी कर दे तो ?····'

बल्लभराम—'क्या फौजदारी करके यह शख्श अपनी जोरू को अपने घर लें गया है ? अरे यह तो सदा से ही होता आया है तू उठ, हिम्मत कर।'

इन्द्रजीत—'परन्तु•••फौजदारी···'

'—हः हः हः मुझे पहले ही मालूम था कि तू डरपोक है। भाई बल्लभराम ! नीचे वकील साहब मोटर में बैठे हैं, उन्हें बुलाओ। नहीं तो ठहरो मैं ही खिड़की से पुकारता हूं।'

खिड़की के पास दुर्लभराम ने इतने जोर से आवाज दी कि जैसे कानों के पर्दे फटते हों। वकील साहब ऊपर आ धमके। इन्द्रजीत घबरा गया। उसकी कुछ समझ में न आता था। पर दुर्लभराम अपने निश्चय पर दृढ़ था।

वकील कुन्दनलाल से दुर्लभराम ने सारा किस्सा कह सुनाया कि इस मुर्दे की जोरू भाग गई है और यह मरदूद चैन से बैठा हैं।

कुन्दनलाल ने कुर्सी पर बैठते हुए पूछा—'तो बोलो मेरे लिए क्या काम है ?'

दुर्लभराम ने वकील साहब को बताया कि इंन्द्रजीत अपनी बहू शिवगौरी को बलपूर्वक हरण करके अपने घर लाना चाहता है; पर फोजदारी मुकदमे से डरता है, बोलो तुम्हारी क्या सलाह है ?'

कुन्दनलाल ने कहा—'सच बात है, यह कोई गांव थोड़े ही हैं। बम्बई में जो ऐसा करेगा, वह कठिनाई में पड़ सकता है।'

इन्द्रजीत को आशा हुई कि अब पिंड छूटा। वह बोला—'मैंने तो यही कहा था···'

बात काटकर दुर्लभराम बोल उठा—'मैंने पहले ही कहा था—मेंने पहले ही कहा था···कायर···डरपोक···वकील साहब तो फिर कैसे किया जाय ?'

कुन्दनलाल ने उन्हें सलाह दी कि किसी तरह उस स्त्री को बन्दरगाह या सान्ताकुन्ज ले जाय। जाय और फिर यहां से उड़ा लिया जाए।

इन्द्रजीत को इस स्कीम पर विश्वास न था, उसने संशय से पूछा—यदि फिर भाग जाय तो?'

कुन्दनलाल ने कहा—'उसके लिए मैं क्या सलाह दूं ? और शिवगौरी भाग तो जायगी ही...'

दूर्लभराम बोला—'भागेगी कैसे—उसे ताले में बन्द करके रखना।'

पर वकील साहब ने बताया कि बम्बई में यह भी कानून के विरुद्ध है।

दुर्लभराम ने सलाह दी कि इन्द्रजीत शिवगौरी को उड़ाकर बड़ौदा ले जाय।

कुन्दनलाल ने कहा—'हां ठीक है।'

इन्द्रजीत ने नम्रता-भरे स्वर में कहा—'बड़ौदा कैसे ले जाऊँ ?' मेरी नौकरी···।'

दुर्लभराम- –'तेरी नौकरी जाय भाड़ में, छुट्टी ले ले, नौकरी छोड़ दे—जहर पी ले—मरजा कायर कहीं के। नवसारी में चले जाना, वहाँ मेरे साझीदार का मकान हैं।'

इन्द्रजीत—'वह यदि न माने तो ?'

दुर्लभराम के क्रोध का ठिकाना न रहा। पंचम स्वर में चिल्लाकर और शब्दों को चबाते हुए बोला—'औरत की ज़ात और मरद की न माने ? तू मरद है या जनखा ? कायर ! डरपोक ! बुजदिल !'

वकील साहब ने हँस कर कहा—'ठीक है औरत को मर्द ही वश में कर सकता है, नहीं तो पिता भी अपनी पुत्री को वश में नहीं रख सकता।'

दूर्लभराम ने कहा—'वकील साहब ! हम बूढ़े हो गए, यही देखते कि औरत जबर्दस्त मर्द के पाँव पड़ती है।'

कुन्दनलाल ने बिदा होने की तैयारी की तो इन्द्रजीत ने पूछा—'तो अब मैं क्या करूँ ?'

दुर्लभराम ने कहा—'हजामत ! तू हजामत कर ! उठ जा और शिवगौरी को उठाकर ले आ। बोल कब यह काम पूरा होगा !'

इन्द्रजीत ने पूछा—'शिवगौरी बन्दरगाह या सान्ताक्रुज कैसे आएगी ?'

दुर्लभराम ने वकील साहब से कहा कि इसे सलाह दो।

कुन्दनलाल ने वकीलों की हाजिरजवाबी दिखलाते हुए कहा कि थोड़े ही दिनों पीछे सेठ मनोहरलाल कुछ मित्रों के साथ अपनी जुहू वाली कोठी में एक जलसा कर रहे हैं, जो कि उनकी भतीजी के जन्म दिन के लिए मनाया जा रहा है। वहाँ शिवगौरी जरूर ही आयेगी। वहाँ से उसे उठा लेना आसान काम है।

इन्द्रजीत ने पूछा कि उसे उठा कर कैसे ले जाएगा?

कुन्दनलाल को हंसी आ गई। उसने वकीलों की भाषा बोलते हुए कहा—'यह मैं किस तरह बता सकता हूं? सलाह देने के जुर्म में मुझ पर कोर्ट में केस चल सकता है।'

दुर्लभराम ने छाती ठोक कर कहा—'यह काम मेरे जिम्मे रहा। बम्बई में गुण्डों का अकाल नहीं है। एक ढुंढो तो हजार मिलते हैं। मैं सब प्रबन्ध कर दूँगा। अब तू उठ और हिम्मत के लिए कमर बांध ले।'

इन्द्रजीत ने 'अच्छा' तो कह दिया; पर उन सबके जाने पर उसका मन डांवाडोल होने लगा।······गुण्डों को साथ लेकर······उठा लाना···जुर्म है······फौजदारी······कुल को कलंक लगेगा······इज्जत मिट्टी में मिलेगी··· अखबारों में छपेगा। वह नहीं आयेगी······आ भी गई तो टिकेगी नहीं······ टिक गई तो दिन-रात······चौबीसों घण्टे कलह-क्लेश रहेगा······न जाने भाग्य में क्या लिखा है······?

सोचते-सोचते इन्द्रजीत ने मेज का दराज खोला और उसमें से अपनी जन्मपत्री निकालकर देखने लगा और उंगलियों पर मेष, वृष, मिथुन, कर्क गिनने लगा। फिर अपने आप चिल्ला उठा···आएगी···वह जरूर आयेगी··· ग्रहयोग ही ऐसा है।'

फिर वह माथे को पकड़कर आरामकुरसी पर बैठ गया।

इतने में गंगा बहन प्लेट में गुलगुले लिय आ पहुँची। बोली—'क्या कर रहे हो?'

'अपना ग्रहयोग विचार रहा हूं कि शिवगौरी आयेगी या नहीं।' इन्द्रजीत ने उत्तर दिया।

गंगा बहन ने हँसकर कहा—'आयेगी तो समझो तुम्हारा दुर्भाग्य लौट आया ·····तुम्हारे बुरे दिन फिर आ गये। शान्ति से बैठने के दिन गये···चैन की साँस न ले सकोगे।'

रुलाई-भरे स्वर में इन्द्रजीत ने उत्तर दिया—'पर कुल की लाज तो रखनी ही पड़ेगी।'

७

सुहानी चमकती साँझ, और····जुहू के तट पर बहते मन्द समीर के झौंके मनहरलाल को पुलकित कर जाते थे। सुन्दर, मोहक और मादक रूप में सजे-धजे बंगले का ड्राइंग रूम सागर की ओर था। साज-सज्जा में किसी भी योरुपीय बंगले की शोभा को भी फीका करने की सामर्थ्य रखता था। शीशे की खिड़कियों तक फूलों से लदी बेलें चढ़ी हुई हल्के गुलाबी सिस्टेंपर से ड्राइंगरूम झल-झल कर रहा था। दीवारें, कालीन और फर्नीचर के वेष्टन सभी गुलाबी रंग के थे। सारा वायुमंडल सुरुचिपूर्ण, मोहक, सुगन्धमय, शोभाशाली और प्रशान्त था।

रंग की समानता के विपरीत दीवार से सहा हुआ पियानो कमरे की शोभा को द्विगुणित कर रहा था। सफेद साड़ी और सफेद ही ब्लाउज में शशिकला हाथीदाँत की पुतली-सी लगती थी। इस समय वह पियानो पर एक विलायती धुन बजा रही है। गुलाब-सा मुखड़ा पुलक और तेज से जगमगा रहा है। मानो आनन्द के सागर के सीमान्त तक वह जा पहुंची है और उसके

सामने आनन्द ही आनंद है। लगता है-सामने कोई चिन्ता नहीं, कोई अवसाद नहीं। अपनी ही सुगंध से—अपने ही लावण्य से—अपनी तरुणाई से—वह पुलक-पुलक उठती। उरोजों का उभार हर्षोच्छ्वास से फूल-फूल उठता।

मनहरलाल चुपचाप आकर द्वार पर खड़े होकर उसे देखते रहे और न जाने क्या-क्या सोचते रहे। अद्वितीय प्रकाश उसके नेत्रों में झलक उठता।

पर शशि को पता नहीं कि वे खड़े भी थे।

क्षण-भर एकटक देखकर मनहरलाल शशि का ओर बढ़े और उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोले—

'शशि !'

'ओह चाचा !' हँसकर शशि ने कहा—'बस एक मिनट, यह धुन तो पूरी कर लूँ।'

धुन पूरी करके शशि ने प्रश्न किया—'चाचा ! तुम संगीत क्यों नहीं सीखते ?'

हँसकर मनहरलाल ने उतर दिया—'शशि ! जब मेरे पास संगीत सीखने के लिए समय था तब धन नहीं था, अब धन है तो मरने की भी फुर्सत नहीं।'

शशिकला ने नयन तरेरकर ओंठ संपुट फड़काकर ग्रीवा की भंगिमा से गर्वलाज और हर्ष को एक साथ प्रगट करते हुए कहा—'ओह चाचा ! संगीत के बिना जीवन पूर्ण नहीं बन सकता—नहीं बन सकता।'

मनहरलाल बोला—'जीवन की पूर्णता के लिए मैं नहीं बना। यह जीवन सदा अधूरा रहा है और रहेगा।'

शशिकला मुस्कराकर बोली—'मैं तो जीवन की पूर्णता को पा चुकी हूं ! क्या कमी है मुझमें ? सब-कुछ ही तो है।'

धन, सम्पत्ति सुन्दरता, शिक्षा, स्वतन्त्रता—मुझे सभी वरदान मिले है—कोई कमी नहीं—कोई कमी नहीं·········'

मनहरलाल ने हंसकर कहा—'कमी है। शशि ! अभी इसमें बहुत कमी है। जब पति का प्रेम-रस और शिशुओं का स्नेह इसमें सम्मिलित होगा, तभी, तेरे जीवन की पूर्णता होगी।'

शशिकला मन्द मुस्कान से माधुरी बिखेरती हुई बोली—'तुम तो मुझे और गृहस्थ की बेड़ियों में जकड़ देना चाहते हो। न जाने तुम्हें मेरे लिए इनमें ही सुख दिखाई देता है।'

'पुरुष हो या नारी—दोनों के जीवन की पूर्णता प्रणयपूर्ण संसार—गृहस्थ के सृजन में ही है। इसके बिना दोनों का जीवन अधूरा ही रहता है।'

शशिकला बोली—'प्रणयपूर्ण संसार का अर्थ है नारी के लिए कारागार ! जहाँ सिवा तड़पने और छटपटाने के उसे···उसे······।'

मनहरलाल ने कहा—'शशि ! जीवन में एक समय ऐसा आता है, जब अधिकार का आग्रह कठोर और कर्कश लगता और स्वाधीनता मृत्यु के तुल्य असहनीय यन्त्रणामय लगती है···तब··तब अपने आप को किसी पर निछावर करने···दे डालने को जी होता है···मन की इसी अवस्था का नाम है—प्रणय ! तू अभी इसको नहीं समझती···तुझे यह समझने में अभी देर लगेगी।'

शशिकला—'पुरुष अपने विकास के लिए जिस स्वतन्त्रता को आवश्यक समझता है, उसे ही नारी के लिए ही बताता है ! चाचा ! यदि मैं स्वतन्त्रता से सबके संग न घूमती फिरती तो मेरी बुद्धि संकुचित ही रह जाती, मैं भी दूसरी स्त्रियों की तरह कूपमंडूक बनी रहती।'

मनहरलाल—'पर शशि ! जिस स्वतन्त्रता से दो प्रेमियों के प्रेम में व्याघात पहुंचने वह स्वतन्त्रता नहीं, उच्छृंखलता है······'

इसी समय रामा चाय की ट्रे लेकर आ गया। कुछ देर दोनों चाय पीने में लीन रहे। फिर शशिकला बोली—

'तुम्हारा विचार है कि प्रेम और स्वतन्त्रता एक साथ नहीं टिक सकते। ऐसा संभव नहीं कि प्रणय के साथ-साथ स्वतन्त्रता भी अक्षुण्ण रहे······'

मनहरलाल कोमल वाणी में कहने लगा—

'शशि ! जहाँ स्वतन्त्रता आ गई, वहाँ प्रेम-बन्धन को अवकाश कहाँ ?'

शशिकला—'मित्रता के लिए तो अवकाश है ?'

मनहरलाल—'शशि ! मैं तो पुराने विचारों का व्यक्ति हूं। नारी और पुरुष बिना पुण्य के एक-दूसरे के मित्र हो सकते हैं, यह मेरी समझ से बाहर है। नारी पुरुष की ओर आकर्षित हो, पुरुष नारी पर मुग्ध हो जाए, इसका-- प्रेम का अंग्रेजी में जिसे Palship कहते है, उसका मूल सृष्टि के महानियम में निहित है। इस नियम का बन्धन उतना मानव-हृदय से नहीं जितना Biology से—पशु शास्त्र से है। मनुष्य एक ऊंचे दर्जे का पशु है, पुरुष और स्त्री ये दोनों मानव-पशु के प्रकार हैं। दोनों परस्पर आकर्षित होते हैं।

'और वह सर्वथा प्राकृतिक है—नेचुरल है। बस आकर्षण को मनुष्य अपनी भाषा में प्रणय की संज्ञा देता है। प्रणय के अन्दर भी स्त्री-पुरुष संयम रखें—मन में विकार आने पर भी संस्कारों की प्रबलता से वासनारहित—शुद्ध रहें—तो भाषा का दुरुपयोग करके उन्हें परस्पर 'मित्र' कह सकते हैं। पर बात यह है कि ज्यों ही एक पुरुष स्त्री को आकर्षित करता है या स्त्री पुरुष को मुग्ध करती है तो सृष्टि नियमों का चक्र चल पड़ता है और उसका परिणाम होता है मानव से मानव की सृष्टि···मानव जाति की वृद्धि ·····।'

शशिकला बोली—'तुम्हें तो चाचा ! हर जगह यही चक्र चलता दिखाई देता है। दिन-रात व्यापार के चक्कर में और दिन-रात वृद्धि ही वृद्धि दिखाई देती है। तुम शुष्क हो गये हो, तुम्हारी भावुकता घिस-घिस कर सूख चुकी है।'

'और शशि ! जिसे तुम हीरा समझती हो उसे मैं अंगारा मानता हूं।'

'मुझे इसकी परवाह है—देखो, तुम मानती हो कि कुन्दनलाल, गौरीशंकर, मनमुखलाल आदि से तुम्हारे मित्रता के सम्बन्ध हैं। बावली, यदि मैं अपनी पुरानी उपमा दूं तो कहूंगा कि शीशे की अलमारी में शोकेस में रखे खांड के हाथी को देखकर इनके मुंह में पानी भर आता है। सब उसी समय की प्रतीक्षा निरन्तर कर रहे हैं कि कब शीशा टूटे और खाँड का हाथी इनके मुंह में आ जाय। लार टपकती मुझे साफ दिखाई देती है। इन्होंने जो समय-समय पर तुम्हें पत्र लिखे हैं,उन्हें एक बार मेरी ऐनक से पढ़कर तू देख तो सही। उनके एक-एक

शब्द से, एक-एक पंक्ति से प्रणय और वासना टपकती हैं । सिर्फ लिखने वाले में स्पष्ट कथन की तेजस्विता का अभाव दिखलाई देता है ।

शशिकला ने कानो पर हाथ रख लिया । फिर तुनक कर बोली—'चाचा ! तुम निरे पशु हो—सेवेज ! मेरे सब मित्र सर्वथा विशुद्ध क्या परस्पर हँसने-बोलने में ही मुंह से ही पानी भर आता है ?'

मनहरलाल बोले—'केवल-बोलने. उठने-बैठने से नहीं, पर जब एक ही स्त्री को एक पालक समझता है, दूसरा प्रेरणामूर्ति और तीसरा सरस्वती देवी का साक्षात् अवतार—तो समझ लो कि सृष्टि नियम चक्र चल पड़ा ।'

तुझ जैसी कितनी ही भोली-भाली बालायें इस चक्र में पिस चुकी हैं ।

शशिकला—'चाचा ! तुम भी एक झक्की आदमी हो । हम कैसे स्त्री-पुरुष हैं, तुम्हारी समझ से बाहर की बात हैं । हमारे मित्रों की और विकारहीन मनोवृत्तियों को परखने की तुम्हारे बुद्धि ही नहीं है । हम भिन्नतायें एक प्रेमी के सदृश विशुद्धता एवं मित्रों जैसी साहचर्य की आकाँक्षा दोनों ही में व्याप्त है ।'

मनहरलाल—'मूर्खों के सिर-सींग होते हैं ? अच्छा शशि ! तू अपनी बुद्धि एवं आदर्शों की प्रेरणा जैसी इच्छा हो करती रह, मैं तुझे सब रोकता हूं । मैंने आज ही तुम्हारे लिए यह समीप वाली कोठी एक लाख दस हजार में क्रय कर ली है । मैंने सोचा कि जब तक तेरे पास स्वतन्त्र घर न हो तो व्यक्तित्व कैसे स्वतन्त्र हो सकता है ?'

शशिकला—'थैंक्यू चाचा थैंक्यू ! तुम कितने अच्छे हो ! चाचा ! कुल मिलाकर मेरा कितना धन है ?'

मनहरलाल—'(अनोखे ढंग से हंसकर) यही कोई आठ लाख का होगा ।'

शशिकला की आँखें चमक उठीं । वह स्नेह से चाचा के पास आ कर खड़ी हो गई और बोली—'चाचा ! जब मैं अलग रहने लगूंगी तो तुम्हारा मन कैसे लगेगा ?'

मनहरलाल ने खेद-भरी मुस्कान से उत्तर दिया—'मैं कोई इतना

दुर्बल हूं कि तुम्हारे बिना जीवन ही न बिता सकूँ। शशि !' जब तेरे यहाँ बाल-बच्चे होंगे तो उन्हें लाकर अपने पास रखूँगा।'

शशिकला ने तिरस्कार-भरे स्वर में मुँह चिढ़ाते हुए कहा–'बच्चे ! बच्चे ! चाचा ! तुम्हें सिवा बच्चों के कभी और भी कुछ सूझता है ? मैं तुम्हें एक बार नहीं हजार बार कह चुकी हूं कि मुझे ब्याह नहीं कराना, कभी नहीं कराना·········'

मनहरलाल ने हँसकर कहा—'मैं कहता हूं देखना, कोई न कोई तुम्हें मिल जायेगा जिसके साथ तुम ब्याह करोगी।'

शशिकला ने विषय बदलते हुए कहा—'अच्छा यह बताओ चाचा कि मेरे पिता कितना धन छोड़कर मरे थे ?

हँसकर मनहर बोला—'बहुत थोड़ा शशि ! मैं सारा हिसाब बता दूंगा। मेरे पास पाई-पाई का हिसाब है।'

कार की आवाज आई और इतने में शिवगौरी उससे उतरी।

शशि चाचा से बोली—'चाचा ! शिवगौरी भी एक मूर्ख है। इसका पति तो बेचारा गौ है······फिर भी·······'

मनहरलाल हंस पड़ा। फिर बोला—'गौ जैसा पति मिल जाये तो आधुनिक स्त्री की स्वतन्त्रता को कोई भय नहीं।'

शशिकला ने शिवगौरी का अभिवादन किया। शिवगौरी कहने लगी—'मेरे मन में आया कि चलूँ, शशि बहन से मिल आऊँ। ओहो सेठ मनहरलाल भी यहीं हैं।'

मनहरलाल ने सहास कहा—'जहाँ स्त्री-अधिकारों के पक्षपाती होंगे वहाँ कोई-शत्रु भी अवश्य होगा।'

तीनों व्यक्ति चाय पीने में लग गये। कुछ मिनट बाद शिवगोरी ने वाणी में मुस्कान की माधुरी मिश्रित की और नयनों में अर्थ भर कर कहा—'मुझे तो आप में स्त्री-शत्रु होने का कोई लक्षण नहीं दिखाई देता।'

मनहरलाल ने उत्तर में कहा—'यदि मैं स्त्री-शत्रु न होता तो अब तक किसी स्त्री को पसन्द करके उससे विवाह न कर लेता। फिर क्या इस तरह

तुम लोगों के साथ बैठकर चाय पीता ?'

शिवगौरी खिलखिला उठी। कहने लगी—'आपकी बात मैं खूब समझती हूं। स्त्रियों के लिए कोई सीधा सम्मान प्रकट करते हैं और कोई टेढ़े ढंग से। शशिकला ने कहा—'कभी-कभी चाचा इस ढंग से बढ़-चढ़कर बात करते हैं कि पास बैठे दूसरे व्यक्ति अपने-आपको कूड़ा ही समझने लगते हैं।'

मनहरलाल मुस्कराया। शिवगौरी हंसकर बोली—'सेठ, कुछ भी कहो, मैं यह कभी नहीं मान सकती कि आपको नारी के प्रति आकर्षण नहीं है। यह दूसरी बात है कि आपको अपने मनोनुकूल स्त्री नहीं मिली। विधाता जब किसी पुरुष या स्त्री की रचना करता है तो उसकी जोड़ी भी साथ बना देता हैं। आगे फिर भाग्य की बात है कि वह जोड़ी मिले या न मिले, या उल्टी जोड़ी मिल जाए······'

मनहरलाल ने हंसकर कहा—'मेरी जोड़ी बनाने की विधाता को याद ही न रही! शशि की आत्मा की जोड़ी भी विधाता ने अवश्य ही बनाई होगी!'

शशिकला ने चिढ़कर कहा—'मेरी जोड़ी की रचना विधाता करे तो मैं उसकी मरम्मत कर दूँ।'

मनहरलाल ने शिवगौरी की ओर देखते हुए कहा— अच्छा शिवगौरी बहन! विधाता ने तुम्हारी आत्मा की जोड़ी भी बनाई होगी!'

शिवगौरी लाज से गड़ गई। नीचे दृष्टि करके कहने लगी—'यह भी कोई पूछने की बात है ?'

मनहरलाल ने कहा—'अच्छा! जोड़ी का पता किस तरह लगे ? प्लेटोनिक लव के युग में आत्मा की जोड़ी को पहचानने का क्या उपाय है ?'

शिवगौरी—'इसका उपाय तो बड़ा सरल है—

'जहाँ नयनों से नयन मिले,
'ज्योति के रूप सहस्त्र खिले'

'······तुरन्त पता चला जाता है।'

मदिर नयनों से मद-वर्षा करती हुई शिवगौरी एकटक मनहरलाल की

ओर देखती रह गई।

शशिकला खिलखिला पड़ी। बोली—'चाचा ! तुम अरसिक हो। तुम्हें यह सब समझ नहीं आ सकता।'

मनहरलाल ने मन्द हंसी हंसकर सव्यग कहा—'अच्छा नयन मिलने के बाद दोनों बैठे ही बातें करते रहे या और भी कुछ...'

शिवगौरी ने उत्साह-भरे स्वर में कहा—'बातें भी क्यों करें—वहाँ भाषा मौन हो जाती है।'

शशिकला कहने लगी—'चाचा ! हमारे कवि गौरीशंकर इस बात को भली-भाँति समझा सकते हैं। 'मौन-आलाप' पर उन्होंने एक बड़ी ही सुन्दर कविता रची है—लो बड़ी उमर है उनकी, वह देखो. वे ही चले आ रहे हैं।'

मनहरलाल ने व्यंग से कहा—'मौन-आलाप' के सिवा उन्हें और कोई काम है भी ?'

शशि ने मुस्कराकर कवि के स्वागत में कदम बिछा दिये। अभिनन्दन और कुशल मंगल के उपरान्त कवि भी गोष्ठी में सम्मिलित हो गये। बोले—'अच्छा मेरी 'मौन-आलाप' पर चर्चा हो रही थी ! सूक्ष्म कविता तो केवल संस्कारी आत्माओं के लिए होती है, उसका रहस्य तो सुसंस्कृत व्यक्ति ही समझ सकते हैं।'

शशिकला 'मौन-आलाप' की पंक्तियाँ गुनगुनाने लगी—

सखि आओ रस-सागर तीर,
धीरे, धीरे, धीरे !,

मनहरलाल बोला—'भूख लगने पर भोजन पकाने वाली और रोगी होने पर परिचर्या करने वाली की आवश्यकता है.........'

कवि तिरस्कार-भरे स्वर में बोला—'संस्कारी आत्मा वाले तो रस-तरंगों पर ही जीवित रह सकते हैं। सेठजी ! तुम क्या जानो !'

मनहरलाल ने व्यंग्य-भरी वाणी में कहा...'ठीक है यदि बच्चे भूख से बिलबिलाने लगें तो रस-तरंगों के बैंक से उधार ले आओ।'

गौरीशंकर इस व्यंग्य से तिलमिला उठा। बोला—'मर्मिकों का

लोहे के काँटे से नहीं तोला जा सकता······'

मनहरलाल ने अट्टहास करते हुए कहा—'रमणियों के काँटे से तोला जा सकता है·····अच्छा मैं चलता हुं······तुम अपने रस का भाव ताव करो······'

मनहरलाल के जाने से गौरीशंकर ने सन्तोष की साँस ली। फिर शशि की ओर देखकर कहा—

जैसे कीचड़ में कमलिनी विकसित होती है उसी तरह इस वातावरण में शशि विकसित हुई है·· ···शशि की आत्मा का दिव्य आलोक ही उसे इस वातावरण से बनाये है······'और सेठ मनरलाल······

शिवगौरी बात काट कर बोली—'सेठ मनहरलाल जैसे दिखाई देते हैं वैसे अरसिक नहीं है। केवल इतना ही है कि उनकी आत्मा में एक अभाव है।'

गौरीशंकर शशि की ओर एकटक देखते हुए अस्फुट स्वर में बोला—'ओह ! शशि ! तुमसे बढ़कर आत्मा के विकास का साधन दूसरा क्या हो सकता है ?······कहाँ······दृष्टि की संजीवनी······वाणी की प्रेरणा······गति की शक्ति···तुम्हीं हो···'

शशिकला ने मुस्कराकर कहा—'बस–बस बहुत पढ़ाई हो चुकी।'

गौरीशंकर ने प्रत्युत्तर दिया—'मैं प्रशंसा कहां कर रहा हूं, मैं स्पष्ट-वादी हूं, वन्चक नहीं हूं। वह तथ्य है की तुम सरस्वती हो, साक्षात् सरस्वती।

शिवगौरी शुष्क स्वर में बोली—'वास्तव में ही कविवर हो···'

भावनाविभोर स्वर मैं कवि के उद्गार निकले···'शशि ! आज जो कुछ भी मैं हुँ, वह तुम्हारे ही प्रेरणा का परिणाम है।'

शशिकला से न रहा गया। बोली—'कविवर, आप अपनी शक्तियों पर जान–बूझकर अन्याय कर रहे हैं। आपकी सभी रचनाएँ आपकी अन्तःकरण की प्रेरणा से उद्भूत होती हैं।'

गौरीशंकर ने कहा—'शशि ! तुम्हारी प्रेरणा नरसिंहलाल को प्राप्त होती तो वे भाषा–विज्ञान न लिखते।

यदि नानालाल को मिलती तो वे कल्पित कथाओं से गुजरात को न हँसाते और यदि खबरदार को मिलती तो वे मोटरों का व्यापार न करते। इन सबकी प्रतिभा से कविता निःसृत होती।'

हँसते-हँसते शशिकला के पेट में बल पड़ गए। बोली—'ओहो! बस-बस इतनी श्लाघा से मैं पागल हो जाऊँगी। कविवर! तुम्हारी वह क्या कविता है?'

'प्रिये तुम आत्मा का उल्लास····'

गौरीशंकर पुलकायमान होकर बोला—'प्रिये तुम आत्मा का उल्लास, तुम्हीं हो जीवन का मधुमास। प्रिये कर लो मधुरस विनिमय।'

इसी समय कुन्दनलाला आ पहुचे। शशिकला ने आगे बढ़कर हाथ मिलाया। कुन्दनलाल मुस्करा कर बोला—'आज जरा जल्दी छुट्टी हो गई मैंने कहा, जरा जल्दी पहुंचू। फिर शिवगौरी से शिष्टाचार और कुशल पूछने के बाद कवि ओर उत्सुकता से देखने लगे। शशिकला ने परिचय कराते हुए कहा-'वकिल सहाब इनसे मिलिएये है कविवर गौरीशंकर। आप एलाफिंस्टन कालेज के फेलो हैं····'

कुन्दनलाल ने कवि की ओर तिरस्कार-भरी दृष्टि से देखते हुए कहा-'I See! I See!' गौरीशंकर बदले में धृष्टता-भरी दृष्टि से देखकर बोला—'अच्छा, शशि! आज तुम बहुत व्यस्त हो, मैं चलता हूं।'

जाते-जाते व्यंग्य से कवि ने कहा—'शशि! यदि ऐसे व्यक्ति आने वाले हों तो मुझे पहले बता दिया करो।'

शशिकला ने कहा—'खेद है, मुझे क्या मालूम था कि ये लोग आ पहुँचेगे।'

गौरीशंकर गर्व से ग्रीवा ऊंची किये चला गया।

शिवगौरी कहने लगी—'अरे! तुम्हारे चाचा तो चले गये, अच्छा मैं भी चलती हूं।'

शशिकला ने उसे जरा ठहरने को कहा। उसने मधु

बहन का वृत्तान्त पूछा और कहा—'उसे क्यों नहीं लाये ?

कुन्दनलाल कट गया। बोला—'ठीक है। उन्हें घर से बाहर निकलने का चाव नहीं।'

शशिकला स्वरमें उलाहना भरकर बोली—'कुन्दनलाल जी, आप बड़े स्वार्थी है। आप विधु के साथ जीवन का आनन्द नही लेते ! उन्हें संग लेकर किसी दिन पूर्णचन्द्र की ज्योत्स्ना में सागर के तट पर……एकान्त में · ···।'

कुन्दनलाल—'वह एक संन्यासी स्त्री है, उससे भी नही जीवन का आनन्द या उल्लास प्राप्त हो सकता है ?'

शिवगौरी ने समर्थन करते हुए कहा—'बिल्कुल ठीक, ऐसे मौके पर संवादी आत्मा के संग की आवश्यकता होती है।

कुन्दनलाल के मानों मन की बात कही गई। वह उत्साह–भरे स्वर में ोला—'बिलकुल ठीक ! वास्तव में सवादी आत्मा का संग ही ऐसे अवसर र हृदयोल्लासकारी हो सकता है।

यह कहकर वह शशि के मुख की ओर एकटक देखने लगा—मानो उसकी रूपसुधा का पान कर रहा हो।

शिवगौरी मनहरलाल के अभाव से ऊबकर विदा मांगने लगी। पर ाशि ने उसे रोक लिया। अब कुन्दनलाल से स्त्रियों के अधिकारों के मसौदे े बारे में पूछने लगी। कुन्दनलाल बोला—'मैं उसे सोमवार तक दे दूँगा। ाज सप्ताह--भर से उसे ही तैयार करने में व्यस्त हूं। शास्त्रकारों ने हिन्दू-ारी की दशा ऐसी बुरी कर दी है कि···'

शिवगौरी ने उलाहन–भरे स्वर में कहा—'हम तो छः मास से आपकी ुशामद कर रहे हैं; पर प्रतीत होता है कि शशिकला का आग्रह सफल होने ाला है। उनकी प्रेरणा से ही सही काम तो हुआ।'

झेंपते हुए कुन्दनलाल बोले—'नहीं, मैं तो उसे तैयार कर ही रहा ा।'

शशिकला बोली—'कुन्दनलाल जी ! आप जैसों को आगे बढ़कर ऐसी बस्तियों में जाना चाहिये और हमारे अधिकारों की रक्षा के लिए आन्दोलन करना चाहिए।'

कुन्दनलाल ने हर्षित होते हुए कहा—'तुमने जब से कहा तभी से मै उस पर विचार करता रहा हूं। तुम्हारे साथ वार्तालाप करके मेरी समस्त शंकाएँ मिट गई।'

शिवगौरी बड़े नाख-नखरे से मटकते हुए बोली—'सबके मन की शंका दुर करने की शशि बहन में बड़ी सामर्थ्य है।'

कुन्दनलाल उल्लास-भरे स्वर में बोला—'हाँ, शशि में साम्राज्ञी के समस्त गुण एकात्रित हो गये हैं। इनकी आज्ञा से कान करने में दूना मन लगता है। शशि तुम अद्वितीय हो।'

शशि ने उत्तर मे कहा—'अद्वितीय तो आप है, आप अपने गुणों को मेरे कारण मानते हैं। देखिए ! अगले सप्ताह मेरा जन्मदिवस है, आप वहाँ आना न भूलें।'

कुन्दनलाल—'अवश्य, अवश्य ! और शिवगौरी बहन भी आ रही हैं न ?'

'शिवगौरी—'कहा ? किस जगह ?'

शशि—'आगामी सोमवार के दिन, मेरा जन्म-दिन है। चाचा की जूहू वाली कोठी पर हम जन्म-दिन का उत्सब मनाने को एकत्रित हो रहे हैं, तुम्हें भी आना होगा।

शिवगौरी—'आऊँगी क्यों नहीं ··ऐसे शुभ अवसर पर···तुम्हारे चाचा ने थोड़ी आयु में ही बहुत धन कमा लिया······।;

कुन्दनलाल बोला—'बीस वर्ष पहले वे कौड़ी–कौड़ी को मोहताज थे, इनके हाथ मैं पारस है कि जिसे छूते हैं, सोना हो जाता है।'

शशिकला बोली—'सुना है, मेरे पिता भी बड़े चतुर और कुशल थे।'

कुन्दनलाल बोले—'खेद है, मुझे उनसे परिचय पाने का अवसर नहीं मिला।'

शशिकला—'अब आप मेरे सोलीसीटर हैं, आपको मेरी धन-सम्पत्ति का चाचा से पूरा-पूरा हिसाब करना होगा।'

कुन्दनलाल चौंक पड़ा—'चाचा से हिसाब—यह लड़की क्या है? फिर हँसकर बोला—'सारा हिसाब तो मेरे आफिस में रखा है।

शशिकला बोली—'पता है, मेरे लिए चाचा ने एक लाख दस हजार में नया मकान खरीदा है। इतने में विधु को आते देखकर कुन्दनलाल चकित रह गया।

विधुमुखी उदास मुख से आते ही गर्जन-तर्जन करने लगी—'तो श्रीमान्! आप यहाँ हैं! (व्यंग्य से) मुझे पहले ही पता था आप यहीं होंगे। वृद्ध की बछिया बट के नीचे!'

शिवगौरी हँसकर बोली—'तुम्हें भी पता चल गया!'

शशिकला ने बीच-बचाव करते हुए कहा—'विधु बहन! आओ बैठो। अगले सोमवार मेरा जन्म-दिन है। उसी के बारे में बातचीत चल रही थी। तुम भी वहाँ आओगी न?'

विधुमुखी रूठे स्वर में बोली—'भला मेरा वहाँ क्या काम है?'

'वकील साहब जो वहाँ पहुँचेंगे! मेरे आने से क्या होता जाता है?'

कुन्दनलाल हतप्रभ होकर उसकी ओर रौब-भरी दृष्टि से देखने लगा।

शिवगौरी ने कटाक्ष किया—'नहीं बहन! तुम तो शशि बहन की मित्र हो…'

विधुमुखी उसी तरह वेग से बोली—'शशि के मित्र तो यह हैं।' यह कहकर उसने वकील साहब की ओर संकेत किया जैसे कि शाप देने लगी हो।

कुन्दनलाल क्रूर-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा।

शशिकला ने मनाने के स्वर में कहा—'तुम इन्कार कैसे कर सकती हो, तुम्हें आना ही होगा।'

विधुमुखी—'नहीं नौ सौ सत्तर बार नहीं। छः मास हो गए, स्त्रियों

को अधिकार के मसौदे को इन्होंने छूआ तक नहीं, और शशि बहन के एक बार कहने से वह हफ्ते भर में तैयार कर दिया…'

शिवगौरी मनहरलाल को आता देख हर्षित हो चिल्ला उठी—'लो वह चाचा आ गए ! अब झगड़ा छोड़ो ।'

८

प्रभात का समय है । कोई सात साढ़े सात बजे होंगे । सेठ मनहरलाल की कोठी के बरांडे वाले कमरे में कवि गौरीशंकर आनन्द से प्रफुल्ल वदन बैठा कुछ गुनगुना रहा है । कमरे की दीवारें हिमालय के हिम मय शिखरों से सुसज्जित हैं । सामने ही लगातार सागर है । उसमें एक प्रकाश-स्तम्भ अकेलेपन का भार लिये खड़ा है ।

कवि गौरीशंकर शशि को लक्ष्य करके रची गई अपनी कविता गुनगुना रहा है—

दिव्य देवांगना
दिव्य तेजस्वला
दिव्य गति द्वारा ब्रह्माण्ड कम्पित करा
भू पर अवतार से नव वसन्त कारिणी
अंग-अंग अनुपम छवि… '

अकस्मात् किलकारियाँ भरती और उछलती हुई शशिकला आ पहुँची और बोली—'अहा—! कविवर ! नमस्कार ! कहो कुशलता से तो हो !'

गौरीशंकर ने कवित्वमयी वाणी में संगीत भरते हुए कहा—

मधुर वरण तिमिर हरण
ओ शशि बधाई तुझे शतशत बधाई
वर्धापन कुसुम सहस श्रद्धा से—

चरणों में अर्पित तब···

'क्यों शशि ! सबसे पूर्व मैं ही बधाई देने पहुँचा हूं न ?'

शशिकला ने कुन्दकली की दन्त-पंक्ति को विकसित करते हुए कहा—'नहीं सबसे पूर्व तो मैं ही हूं। आज प्रभात में ही मैंने दर्पण में अपने आपको बधाई दी थी। हाँ, मेरे उपरान्त तुम सर्वप्रथम हो। बैठो खड़े कैसे रह गए।'

गौरीशंकर ने कहा—'नहीं शशि ! मैं तो बस बधाई देने आया था, मुझे ट्यूशन पर जाना है। कल तुम्हारी कोठी पर चाय पीने आऊँगा। इस गृह के साथ मेरी आत्मा पार्थिव शृंखलाओं से आबद्ध है···सुन्दरि ! तुम महारानी सदृश शासिका एवं दैवी प्रेरणादायिनी··

बीच में ही टोककर शशि बोली—'बस-बस कवि ! इनकी प्रशंसा।'

गौरीशंकर—'प्रशंसा ?···कितना तुच्छ शब्द है, शब्दों में इतनी शक्ति ही कहा है, जो तुम्हारी प्रशंसा कर सकें !'

'आज इस यौवन के माधवी कुन्ज में कोकिल बोल रही है।'

'अच्छा चलूँ, मुझे ट्यूशन पढ़ाने जाना है।'

शशिकला—'धन्यवाद ! सायंकाल आना न भूलना···'

गौरीशंकर—'अवश्य आऊँगा।'

'मधुर प्राणों में मदिर हिलोर' मोटर में घूमने की अपेक्षा चन्द्रिका में सागर तट पर विहार करने से मिलनाकांक्षा···

शशिकला—'ओह कवि ! तुम इस समय बहुत कवित्वमय, बहुत भावुक हो गये हो। देखती हूं युवकों में नारी के प्रति श्रद्धा-भक्ति बढ़ रही है। अच्छा सांझ को जरूर आना।'

गौरीशंकर के चले जाने पर उसके शब्दों से शशिकला भावाकुल और रोमांचित होती रही। दर्पण में कभी अपने ही रूप पर मोहित होकर अपने आप ही तन-मन वारती, फिर अपने सफल जीवन पर हर्षविभोर होती सोचती रही कि धन, ऐश्वर्य, रूप, कला, मित्रता प्रभुत्व मुझे क्या प्राप्त नहीं है ? मेरे जीवन में कोई कमी नहीं, कोई अभाव नहीं। मेरा जीवन रमणीयता का पुन्ज है। मैं स्वयं अपनी स्वामिनी हूं। सर्वाधिकारों से युक्त अपनी स्वामिनी······'

अकस्मात् मनहरलाल ने कमरे में प्रवेश किया और बोला—'अहा ! स्वगत भाषण हो रहा है ।'

फिर स्नेहसिक्त स्वर में शशि के कन्धे पर हाथ रखकर कहा—'तुम सुखी रहो, बस यही मेरे जीवन की आकांक्षा है ।'···कहते-कहते उसके नयनों में अश्रु झलक आये ।

शशिकला ने सादर कहा...'चाचा ! आज इतने गम्भीर क्यों हो ? क्या बात है ?'

मनहरलाल उदास स्वर में बोला—'ओह ! तुम नहीं जानती आज तुम्हे स्वाधीनता मिली और मुझे मिला सतत एकाकीपन··· ···'

शशिकला ने टोकते हुए कहा—'चाचा ! ऐसा क्यों सोचते हो ? मैं वयस्क हुई तो क्या तुम्हारी कुछ नहीं रही ?हम नित्य प्रति मिला करेंगे······'

मनहरलाल भावावेश में बोला—'मिलना वार्तालाप करना और संग–संग रहना इसमें कितना अन्तर है ! मैं इंलैंड चला जाऊँगा ।'

शशिकला ने मुस्कराते हुए कहा—'चाचा ! न न चाचा ! तुम्हीं पथ–प्रदर्शक हो ।'

मनहरलाल—आधुनिक नारी को पथ–प्रदर्शक की आवश्यकता नहीं··· हाँ, तेरा संगरक्षक होने के नाते तुझे एक सम्मति······एक अन्तिम आज्ञा दूँगा । बात यह है कि २० वर्ष तक तेरा लालन-पालन करके मैंने तुझे एक अद्वितीय नारी बनाने का प्रयत्न किया है ।'

शशिकला–तो क्या मैं अद्वितीय नारी के रूप में विकसित नहीं हो रही?'

मनहरलाल—'नहीं शशि ! कदापि नहीं ! तू एक वेश्या की तरह अपना विकास का ह्रास कर रही है ।'

शशिकला के क्रोध का वारापार न रहा । गुस्से से कांपते हुए स्वर में बोली—'वेश्या ! तुमने मुझे वेश्या कहा न···'

मनहरलाल ने प्यार-भरे हाथ से उसके बालों की लट पीछे करते हुए कहा—'रूठ गई ? अद्वितीय स्त्री हृदयों उपास्य हो जाती है । दूसरों के हृदयों को संवारती है, उन्हें ऊँचे उठाती है और । और तुम भयंकर क्रीड़ा करती हो,

दूसरों के हृदय से क्रीड़ा करते हो। ऐसी क्रीड़ा वेश्या किया करती हैं धन के लिए और तुम यह सब करती, अपनी मुंह की पुष्टि के लिए—इसलिए मैं यह कहने पर विवश हूं कि तेरी आत्मा वेश्या की आत्मा-सी बनती जा रही है।'

शशिकला के तन-बदन में आग लग गई। क्रोध से कांपते हुए बोली—"हां, यदि मेरी आत्मा किसी की दास हो जाये, तो आपको ठीक लगे। पुरुष जाति स्त्री जाति को गुलाम के रूप में देखकर ही खुश होती है।'

मनहरलाल ने धीर-भरे स्वर में कहा—'नहीं वेश्या और दासी के बीच में और भी तो कई स्तर हो सकते हैं—सती, महारानी, सखी, और देवी भी तो वह बन सकती है।'

शशिकला अब कुछ शान्त हो चुकी थी, बोली मेरी—'मेरी आत्मा महा, रानी या देवी की नहीं है, यह तुम्हारे कहने से ही हो जायेगा? जरा दूसरों से तो पूछकर देखो।'

मनहरलाल ने शान्ति से कहा—'मुझमें और दूसरे लोगों में भेद है। मैं लोभ में पड़कर छलने के लिए तुम्हारी बड़ाई नहीं कर सकता। यदि साहस है तो आज सुन ले, फिर इस तरह की धनी स्त्री को कोई कहने का साहस न कर सकेगा—यदि तू सती की आत्मा रखती तो भक्ति से पुरुष को वशवर्ती करती, सखी की होती तो सरल भाव और देवी की होती तो भाव प्रेम प्रेरणा से बनाती। तुम तो बुद्धि की चतुराई से, वस्त्राभूषण के सिंगार से, बार्तालाप के चमत्कार के ढंग से, कटाक्षपात से, अधरों की मुस्कान से और सबसे बढ़कर अपनी रमणीयता को कमनीयता-भरी मोहिनी से पुरुषों को बावला बना रही हो—एक को नहीं अनेकों को…'

शशिकला कड़वा घूंट बड़ी कठिनाई से पचा पाई। बोली—

'चाचा! तुम्हें क्या हो गया?'

'खेद है, स्पष्टवादिता के लिए, मेरे पास कल ऐसा कहने का अवसर और अधिकार न रहेगा। याद रख, आज मैं तेरा अभिभावक हूं—

संरक्षक हूं, इसी से किसी और को वास्तविक रूप तेरे आगे रखने का साहस नहीं होगा। कल ही जब तू एकाकिनी हो जायेगी तो लोगों की जबान बन्द न रहेगी।'

'तुम्हारे ख्याल में तो जैसे सभी मुझसे शादी करना चाहते हैं। अच्छा योरुप की स्त्रियाँ किस तरह स्वतन्त्रतापूर्वक पुरुषों से मिलती बोलतीं हैं। वहाँ क्यों नहीं उन्हें कोई कुछ कहता?'

'भारत योरुप नहीं—न ही हो सकता है। वहाँ के पुरुषों में जो रक्त बह रहा है, वह उनको नारी का सम्मान सिखलाता है। वैसा इनमें नहीं है। वहाँ की स्त्रियां सहस्त्रों पीढ़ियों से आत्म रक्षण की प्रवृत्ति का विकास कर चुकी हैं। वे किसी भी पुरुष के साथ भ्रमण, क्रीड़ा विनोद करेंगी, पर जिससे शादी नहीं करनी उसे दूर रखने की शक्ति उनमें है। भारत की नारी में इस शक्ति का अभाव है।'

'ईश्वर ने हमें आत्मरक्षण की शक्ति नहीं दी।'

'भारत की ना री में और तुझमें भी वह शक्ति अभी विकसित नहीं हो पाई। कान खोलकर सुन ले—आज जिन हृदयों को जला रही हो उनकी ज्वाला जिस दिन उठेगी उस दिन तेरा धन, स्वातन्त्रय, योवन-शिक्षा—कोई भी तेरी रक्षा न कर सकेंगे और उस दिन सभी लोग तुझे कहेंगे—वेश्या......'

'और गालियाँ दे लो।'

'दुःख है मुझे स्पष्ट कहना पड़ा। तुम यदि अपनी बुद्धि और भावमयता से दूसरे हृदयों को प्रेरणा देतीं—स्फूर्ति देतीं तो खेद न था—जो तू अपने स्त्री शरीर से दूसरों की प्रेरणामूर्ति बनने का ढोंग रचती है, उससे मुझे दुःख होता है। स्त्री शरीर···

'और स्त्री शरीर से ही प्रेरणा देनी हैं तो किसी एक की स्त्री बन।'

इस गर्मा गर्मी में व्यवधान पड़ गया। गुलाब दास और कुन्दन ला

आ गए। कुन्दनलाल ने बधाई दी और भेंट-स्वरूप गहनों का डिब्बा उसके हाथ में पकड़ा दिया। शशि ने धन्यावाद दिया। बेमतलब की बातें होने लीं।

मनहरलाल ने गुलाबदास से कहा—'जब से मैंने धन कमाना शुरू किया है, उस दिन से सारा हिसाब तुम्हारी फर्म के खाते में है। और यह कोठी मैंने आज के दिन भेंट देने के लिये खरीदी है। ये रहे उसके कागजात।,

शशि बोली—,चाचा ! क्षमा करना। मैं सब हिसाब देखना चाहती हूं।

मनहरलाल चौंक उठा। उसकी आँखों में [पीड़ा की कसक दिखाई दी। उसे स्वप्न में भी ख्याल न था कि शशि उसी से व्यवहारिकता की बात करेगी —उसी पर अविश्वास करेगी। उसने कहा—'हाँ सब-कुछ देखो। गुलाबदास तुम्हें सब-कुछ दिखा देंगे।'

शशिकला तनिक उग्रता से बोली—'मेरे पिता कितनी धन-सपत्ति छोड़ गए थे ?'

मनहरलाल ने उत्तर दिया—'यह सब-कुछ तुम्हारे ही पिता का ही पुण्य प्रताप तो है...'

कुन्दनलाल ने शशि की बात को स्पष्ट करते हुँए कहा—'शशि का मतलब है कि उसके पिता आपके पार्टनर थे न ! उसी के विषय में वह जानना चाहती है।,

मनहरलाल ने रुलाई रोकते हुए कहा—'हाँ पार्टनर थे, पर उस समय हमारे पास था तो कुछ नहीं...जब मैं पहले-पहले बम्बई आया था तो धोतिय कंधे पर लादकर बेचा करता था फेरी किया करता था।'

शशिकला ने आशय स्पष्ट करने की दृष्टि से कहा—'यह जो रुपया मेरे नाम जमा होता रहा, वह मेरे पिता का ही था न ?'

मनहरलाल--'हां।'

कुन्दनलाल-- उस का हिसाब ही शशि मांगती है।

मनहरलाल—(वेदना से) 'हां उसका हिसाब आज सांयकाल तक गुलाब-

दास जी को दे दूंगा ।'

इतना कहकर मनहरलाल चला गया । शशि ने रोकने की कोशिश की, पर व्यर्थ ।

शशिकला खिसयानी हंसी हंस कर बोली, 'प्रतीत होता हैं कि चाचा बुरा मान गए ।'

कुन्दनलाल ने कहा—बुरा मानते हैं तो मान जायें, व्यवहार की सफाई तो चाहिये ही ।'

गुलाबदास से न रहा गया । बोला—'बुरा हुआ, बहुत बुरा हुआ ।।

गुलाब दास के जाने पर कुन्दनलाल ने शशि से कहा—यह तो बिजनेस है, उसमें घबराने या बुरा मानने की क्या बात है ?'

शशिकला ने खिन्न मन से कहा—'ओह ! मुझे क्या सूझी ! अपने पालन-कर्ता पर सन्देह !'

कुन्दनलाल ने व्यंग किया—'प्रतीत होता है, सारा हिसाब-किताब देना उन्हें मुश्किल हो रहा है ।'

कुछ क्षण दोनों में बातें होती रहीं । तब कुन्दनलाल भी विदा हुए ।

रात्रि के नौ बजे के करीब सागर और सेठ के बंगले के बीच की रेतीली भूमि पर गौरीशंकर बैठे चन्द्रिकाधवल तट को देखकर हर्षमग्न हो रहे हैं ।

इसी समय बंगले के पियानो पर शशि गा रही थी—

'तेरी मेरी प्रीत पुरानी···'

कवि गौरीशंकर का हृदय तरंगित हो उठा वह अपने प्रिय गीत को गुनगुनाने लगा—

'हृदय में प्राणों का मधुमाल
तुम्हारा सुमधुर हास
अमर आत्मा की मृदु झंकार
तुम्हारी विह्वल तान ।'

लगता है शशि की आत्मा का मुझसे जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध है। विचार भावना और मनस्तरंगों की ऐसी समता ! न जाने कितने जन्मों की तपस्या के फलस्वरूप हमें एक-दूसरे के साहचर्य का अवसर मिला है। बुद्धि में, रसिकता में, कविता भावना में, वाणी-विलास में, सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि में हम दोनों की कितनी समरसता है। उसकी रमणीयता और मेरी बुद्धिमत्ता, उसकी प्रेरणादायता और मेरी···मेरी···उसकी धनाढ्यता और मेरी महत्वकांक्षा···

विचारों की इसी उधेड़बुन में उसने देखा कि रोनी सूरत लिये विधुमुखी आ रही है। विधुमुखी अपने ध्यान में मग्न बड़बड़ा रही थी—हे परमेश्वर मुझसे अब नहीं रहा जाता। मुझे किन पापों का यह दण्ड मिल रहा है ? शशि जब मेरे पति से हँसी ठट्ठा करती है तो मेरी छाती पर साँप लोटने लगता है। सहाय, मुझे रोने का भी हक नहीं···

इतने में मोतीराम आ गये। विधु से बोले—'बहन ! तुमको क्या हो गया है ?'

'होना क्या है ? जब मैं तुम्हारे यहाँ से घर पहुँची तो बहुत रुष्ट हुए। मैं अपने कमरे में पड़ी रोती रही। और वे चैन से सोते रहे। मरती भी नहीं कुलटा। मैं चाहे रोती मर जाऊँ। हाय ! हिन्दू नारी के भाग्य में रोना ही बदा है ?'

'रोओ मत बहन धीरज रखो। सब ठीक हो जायेगा।'

सेठ मनहरलाल के आने पर शशिकला लजा गई। कहने लगी—'चाचा तुमने मेरे लिये घर खरीदा है न ! उसी के बारे में कुन्दनलाल जी से विचार कर रही थी।···पर चाचा ! कुछ दिनों तक मैं अकेली नये घर में उदास ही रहूंगी···,

मनहरलाल ने मुस्कराकर कहा—'स्वतन्त्रता का अर्थ यही है, अकेलापन ! शशि ! नये घर में तुम्हें मेरे जैसा नारीशत्रु तंग करने नहीं आयेगा।' फिर विधु

की ओर देखकर मनहरलाल ने पूछा—'कहो विधु ! क्या हाल है ? कुछ घबराई-सी क्यों लग रही हो ? क्या वकील साहब से कुछ झगड़ा हो गया है ? शशिकला ने हँसकर कहा—क्या सभी तुम्हारी तरह हैं, जो सदा लड़ते रहें !'

मनहरलाल बोला—'शशि, जिससे स्नेह प्यार करता हो, उसी से तो कोई लड़ता है, दूसरों से कौन लड़ने जाता है !'

विधुमुखी बोली—'पुरुष चाहे कुछ भी करे, हमें उसका बुरा न मानना चाहिए।' मनहरलाल ने कहा—'यदि स्त्री पुरुष के किये का कहे का बुरा मानेगी तो और दुःख पायेगी···'

कुछ देर यों ही व्यंग-भरी बातें होती रहीं। फिर कुन्दकलाल और विधु विदा हुवे।

उसके जाने पर शिवगौरी ने कहा—'जान पड़ता है दोनों में कलह हुई है।' इस पर मनहरलाल ने कहा कि पति-पत्नी में कलह नहीं होगी तो और किसमें होगी ? एक में दो होने पर फिर से वे एक होने का प्रयत्न करने लगते हैं। जितना ही प्रेम गूढ़ होगा, उतने ही प्रयत्न भी अधिक होंगे। पर लोग इन एक होने के प्रयत्नों को लड़ाई का नाम दे देते हैं।

इस पर शशिकला बोल उठी—'चाचा ! तुम शिवगौरी की इन्द्रजीत से सुलह करवाओ तो जानें।'

शिवगौरी अग्नेय नेत्रों से शशि की ओर देखने लगी और बोली—'हमारी सुलह कराने की किसी में शक्ति नहीं है।'

शशिकला ने शान्त भाव से कहा—'क्रोध करने की आवश्यकता नहीं। पर तुम्हारे दुःख सहने का कारण समझ में नहीं आता। यदि तुम चाचा से कहो तो वे मिनटों में सुलह करा दें

यह कहकर शशि ने चुटकी बजाई कि जैसे अभी शिवगौरी और इन्द्रजीत की सुलह मिनटों में होने वाली है।

शिवगौरी दीनभाव से मनहरलाल की तरफ देखती हुई ऊँची साँस लेकर

कहने लगी—'नहीं, हमारी सुलह नहीं हो सकती। तुम तो शशि मुझ दुखयारी के जले पर नमक छिड़कती हो। मैं जैसे तैसे जीवन काट रही हूं।'

मनहरलाल ने शशि को टोकते हुये कहा—'शशि! तुम मूर्खता मत करो। शिवगौरी और इन्द्रजीत को अलग-अलग रहने दो। यदि फिर से दोनों इकट्ठे हुए तो समझो दोनों ही कुम्भीपाक के नरक में जलने लगेंगे।'

मनहरलाल की यह बात शिवगौरी के मन में लगी।—'चाचा बड़े बुद्धिमान और सूझ-बूझ वाले व्यक्ति हैं।'

मनहरलाल कहने लगे—-तुम लोग यदि बुद्धिमता और सुझबुझ के कायल हो जाओ तो इतना दुख ही न उठाओ।,

शशिकला ने करुण-स्वर में कहा—'शिवगौरी बहन, तुम्हारी दशा देखकर मुझको बहुत ही खेद होता है। बेचारी...'

शिवगौरी मनहरलाल को देखते हुए बोली—'सेठ! मैं तो बिल्कुल पिस चुकी हूं। मेरा तो सारा जीवन ही चौपट हो गया।'

मनहरलाल ने संवेदना के स्वर में कहा—'हाँ मैं देख रहा हूं।'

शिवगौरी उत्साहित होकर बोली—'हाँ मैं कब से देख रही हूं कि एक आप ही हैं, जो मेरा दुःख-दर्द समझते हैं।'

शशि ऊब रही थी, यह जानकर शिवगौरी ने विदा ली।

तब गम्भीरता से शशि को समझाने के स्वर में चाचा बोले—'शशि तू हँसी-मजाक में ही घरों में आग लगा रही है।'

शशिकला—'कैसे ?'

मनहरलाल—'कैसे ? उस कवि को तुमने पागल बना डाला है। विधु का घर तुम्हारे कारण बिगड़ने वाला है...'

शशिकला—'चाचा! ऐसे घर बिगड़ने लगे तो रह गई बात...'

मनहरलाल—'शशि! तुम कौमार्य-व्रत के ढोंग की आड़ में हृदयों में

खेल रही हो। यदि हृदय के बदले हृदय का प्रतिपादन नहीं कर सकती तो हृदय को आकर्षित ही क्यों करती हो ?'

शशिकला—'मैं किसी को बुलाने जाती हूं ? वे अपने-आप मेरे पास चले आते हैं......'

मनहरलाल—'नहीं शशि ! तुम सिंहनी हो। पुरुषों और स्त्रियों का रक्तपान करके ही तुम्हें तृप्ति होती है।'

शशिकला—'बस चाचा ! अधिक क्रोध मत करो। चलो मुझे नया घर दिखाओ। मनहरलाल, चलो !'

कुछ दिनों बाद एक घटना हो गई। विधुमुखी ने वकील साहब की मेज पर एक चिट्ठी देखी। उठाकर वह पढ़ने लगी—

'मेरे प्रिय कुन्दनलाल !

'आज रात को आठ बजे आऊँगी। एकान्त में मिलना...शशि।'

विधुमुखी ने क्रोध में आकर चिट्ठी फेंक दी और बड़बाने लगी—'मेरे प्यारे,...रात के साढ़े आठ बजे आऊँगी ...एकान्त में मिलना...दिन में जाने कितनी वार मिल चुके होंगे। अभी रात में मिलने की कसर है, वह भी एकान्त में जी चाहता है, इसे गोली मार दूं।'

शिवगौरी को आते देख विधु ने पत्र और आँसू छिपा लिए। शिवगौरी ने विधु को देखकर पूछा—'क्या बात है ?' विधु ने कहा—कुछ नहीं। तुम्हारा क्या हालचाल है ?

शिवगौरी ने कहा—'मुझे कौनसा शेर खा रहा है ? इधर जाते हुए मैंने कहा पूछ आऊँ कि तुम शशि के जन्म-दिन पर आ रही या नहीं।'

विधुमुखी बोली—मैंने तो अभी कोई निश्चय नहीं किया।,

शिवगौरी व्याकुल स्वर में बोली—'चाचा को बुरा लगेगा, नहीं तो मुझे शशि पर इतना गुस्सा आता है, जी चाहता है, इसका मुँह न देखूँ। कितनी निर्लज्ज है ?

'अभी कल की छोकरी हैं। और पुरुषों के गले इस तरह पड़ती हैं

कि क्या कहूं ? उसके चाचा भी नहीं रोकते '',

विधुमुखी ने उत्तर में कहा कि उसके चाचा ने ही तो उसे छूट दे रखी है। पहले तो लाड़ प्यार में उसका दिमाग खराब कर डाला है, अब क्या हो सकता है ?

शिवगौरी ने और निकट होकर कहा—'बुरा मत मानना। तुम मेरी बहन हो। जानती हो, कल मेरे सामने ही कुन्दनलाल जी से इस तरह बात कर रही थी···कि···'

विधुमुखी आँसू न रोक सकी। बोली—'बहन ! क्या करूँ ? चुपचाप देखते रहनो के सिवा मैं कर ही क्या सकती हूं ?'

शिवगौरी ने ढाढस बँधाते हुए कहा—,बहन धीरज रखो। जिस दिन तुम्हारे साथ मेरे घर आई थी, मैं तभी से उसकी चाल-ढाल समझ गई थी।'

विधु फुफकारकर रो उठी। बोली—'मैं उसका मुँह भी नहीं देखना चाहती।

शिवगौरी ने ढाढस बाँधते हुए कहा...'बहन ! कल कुन्दनलाल जी से किस तरह खुलकर बातें कर रही थी —किस तरह हँस रही थी—नेत्र नचा रही थी—कुब्जा कहीं की ! तुम्हारी सखी समझकर मैं कड़वा घूंट पीकर रह गई, नहीं तो···नहीं तो···क्या स्त्री समाज की चौधरानी बनती है—मुझे पूछती है—'तू ससुराल क्यों नहीं जाती ?' जैसे मैं इसके घर का खाती हूं। हूं ! मेरे तो जी में आया कि इसकी कैंची से जीभ काट लूँ ! मुझेतो जो भी कहती—तुम्हारे घर बार में आग लगाने का उसे क्या अधिकार है ? तुम कुन्दनलाल जी से कुछ कहती क्यों नहीं ?'

विधु ने आह भर कर कहा—'क्या करूँ मैं विवश हूं।'

शिवगौरी बोली—'ओह! मुझसे तो देखा नहीं जाता। तुम्हारा दुःख देखकर मेरा जी जलता है।' इतना कहकर शिवगौरी विधुमुखी की पीठ पर प्यार से हाथ फेरने लगी।

विधुमुखी क्रुद्ध स्वर में बोली—'बहन! मर्द कहीं कहा मानते हैं? वे तो जो जी में आये करते हैं। इसी से तो मैं परेशान हूं। ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा संसार मिटने वाला है···मिटने वाला है।'

इतना कहकर नयनों से झर-झर अश्रु वर्षा करने लगी।

शिवगौरी ने सान्त्वना देते हुए कहा—'तुम्हारी जगह मैं होती तो कभी भी सहन न करती। पुरुष जो जी में आये करें और स्त्री से बन्दी जैसा व्यवहार करें···यह कितना आश्चर्यजनक है। मैं इस डबल स्टेंडर्ड के विरुद्ध हूं। मैं तो देने और लेने के लिए एक ही तुला रखने के पक्ष मे हूं।

शिवगौरी ने देखा विधुमुखी उसकी बातों को बड़े ध्यान से सुन रही है। बोली—'विधु? नारी को ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिए। शठे शाठ्यं समाचरेत्,—दुष्ट के साथ दुष्टता का ही बर्ताव करना चाहिए।'

कानों पर दोनों हाथ रखकर विधुमुखी ने विरोध किया—'नहीं बहन, नहीं। मैं छोटी सी थी···तब से इनकी पूजा करती रही हूं, मैंने सदा उन्हें देवता-समान जाना है। वे चाहे कुछ करें···भले ही मेरे हाथ से निकल जाएँ···मैं अतीत की उन मधुर स्मृतियों के भरोसे ही जीवित रहूंगी। इनकी घर-गिरस्ती और बाल बच्चों का पालन-पोषण करूंगी। पुरुष उचित मार्ग छोड़ दे, स्त्री भी छोड़ दे। यह बात मेरी तुच्छ बुद्धि में नहीं आ सकती।

शिवगौरी ने आक्रमण जैसे स्वर में कहा—'तुम्हारी जैसी कायर और भीरु स्त्रियों ने ही पुरुषों को सातवे आसमान पर चढ़ा रखा है। तुम कुन्दनलाल की सेवा में मरी जा रही हो और वे किसी दूसरी की सेवा में लगे हुए ?··· वाह ! जितना झुकते जाओ दुनिया उतना ही दबाती है।'

विधुमुखी सोच में पड़कर बोली—'शायद, ठीक ही कहती हो···'

इसी समय मोतीराम आगए। कुछ देर बातें होती रहीं। फिर विधुमुखी ने कहा—'बहन ! एक काम करोगी ? वकील साहब पूछने आये या उनका आदमी आए तो कह देना मैं पिक्चर देखने गई हूं।

शिवगौरी समझ गई कि उसका मंत्र काम करने लगा है, कुन्दनलाल इसी तरह से सीधे होंगे।

मोतीराम और शिवगौरी तो चले गए।

विधुमुखी के मन में अन्तर्द्वन्त शुरू हुआ—ओह ! परमेश्वर ! आज मेरे मन की यह दशा ? जो लड़की मनसा-वाचा-कर्मणा पति की अनुगामिनी रही—वही आज एक दुष्ट लड़की की बातों में आकर पति से विपरीत चलने लगी। पुरुष पर स्त्री का हो सकता है, परन्तु स्त्री भी पर-पुरुष की हो सकती है, पर क्यों ? क्या स्त्री और पुरुष की समता हो सकती है ? कैसे ?···पर क्यों नहीं।

विधुमुखी इसी उधेड़-बुन में लगी हुई थी कि इतने में कुन्दनलाल शशिकला को संग लिए हुए आ पहुंचे ?

शशिकला— कैसी हो विधुमुखी !'

पर विधुमुखी ने सुनी-अनसुनी करके पति को अधिकार-भरे स्वर में पूछा—'खाना नहीं खाओगे ?'

कुन्दनलाल ने शशि की ओर निर्देश करके कहा—'इनसे पूछो।'

विधुमुखी ने तुनककर कहा—'मुझे सीधे जवाब दो कि खाना खाओगे या खा चुके ?'

कुन्दनलाल—'मैं खा चुका हूं।'

विधुमुखी—'मैं भी खा चुकी हूं।'

क्रोध में बड़बड़ाती विधुमुखी चली गई तो शशिकला ने कहा—'शायद इनकी तबीयत ठीक नहीं। कुन्दनलाल ने प्रत्युत्तर में कहा—'हाँ कुछ बेचैनी-सी लगती है। बैठो न, शशि ! हाँ तुम क्या कहने लगी थीं ?

शशिकला ने बैठते हुए कहा—'कल मुझे मेरे चाचा मेरी सम्पत्ति सौंप देंगे।'

कुन्दनलाल बोले—'हाँ मुझे उन्होंने सूचित किया था।'

शशिकला—'अपने सीनियर पार्टनर गुलाबदास को चाचा का सोलीसीटर बना देना और स्वयं सोलीसीटर बनकर सम्पत्ति का ठीक-ठीक बँटवारा कर लेना, क्योंकि मुझे अपना अलग सोलीसीटर चाहिए। कुछ सम्पत्ति है ?'

कुन्दनलाल—'मेरे लिए इससे बढ़कर और आनन्द की बात क्या हो सकती है कि मैं तुम्हारा कुछ बनूँ ? (मुस्कराकर) पर इसकी क्या आवश्यकता है ? क्या चाचा पर तुम्हें शक है ?'

शशिकला—'हाँ शक है। जब भी मैं अपने पिता के व्यापार के

विषय में उनकी बड़ी सम्पत्ति और पैसे के विषय में पूछा, तभी चाचा हँसकर टाल जाते हैं। मुझे संदेह है कि इसमें कुछ गोलमाल है। मेरा यह मतलब नहीं कि चाचा बेईमान है। पर मेरे पिता की कितनी पूँजी थी, इसका हिसाब लेना तो मेरा अधिकार है। जैसा लड़के अपने हक के लिये करते हैं, वैसे ही मुझे भी करना है।'

कुन्दनलाल बोला—'ठीक है। मैंने रजिस्टर देखे हैं। कोई सत्रह वर्ष हुए तुम्हारे चाचा ने हमारी फर्म से ६ सौ रुपये जमा कराकर हिसाब खोला था और फिर क्रमशः उसमें रुपया जमा कराते रहे, जो अब एक धनराशि बन गई।'

शशिकला—'इसी से तो मुझे संदेह होता है कि धन कहां से एकाएक आ गया, मुझे चाचा का धन नहीं चाहिए—पर मैं अपने हिस्से की एक पाई भी न छोड़ूँगी।'

कुन्दनलाल—'ठीक है, ठीक है। तुम्हारी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। तुम पुरुषों को नाकों चने चबा सकती हो।'

शशिकला सगर्व बोली—'मुझे कोई कमजोर न समझे।'

कुन्दनलाल बोले—'सेठ मनहरलाल स्त्रियों को सदा कमजोर समझते हैं।'

शशिकला—'मैं उनका भ्रम दूर कर दूँगी।'

कुन्दनलाल ने कहा—'बिल्कुल ठीक है, यू आर वन्डरफुल।'

शशिकला गर्व से ग्रीवा ऊँचा किये वक्ष ताने चली गई और वकील साहब मन-ही-मन उसके रूप और गुणों की प्रशंसा करते रह गए। विधु आकर कुरसी पर बैठ गई। क्रोध से उसके ओठ फरफरा रहे थे। पर वह दमन किये बिना बैठी रही।

कुन्दनलाल को बुरा लगा, बोला—'मुझे तुम्हारा यह व्यवहार ठीक नहीं लगता। शशि का स्वागत क्यों नहीं किया ?'

'मैं उसे बुलाने गई थी ?'

'मेरा जो भी फ्रेन्ड आये उसका स्वागत तुम्हे करना चाहिये।

'जो मेरे मित्र होंगे, उनका स्वागत करूँगी, पर शत्रुओं का स्वागत क्यों करूँ ?'

'शशि तुम्हारी शत्रु है ?'

'मुझसे पूछते हो ? अपने दिल से पूछो। पहले सीधे घर आया करते थे, अब उसके यहाँ जाते हो। पहले मुझे सैर को ले जाया करते थे, अब उसे ले जाते हो। जब वह तुम्हें ही मुझसे छीन लेना चाहती है तो वह मेरी शत्रु है या कुछ और ?'

इतना कहकर विधुमुखी सिसकने लगी।

कुन्दनलाल ने क्रोध-भरे-स्वर में कहा—'तू पागल तो नहीं हो गई ? इतना पढ़-लिखकर भी मूर्ख ही रही। शशि क्या साधारण नारी है ? वह तो देवी है, देवी।'

व्यंग्य से विधुमुखी ने प्रत्युत्तर दिया—'हाँ देवी ! पता नहीं ये देवियां कहाँ से उतर आई हैं, जो पराये मर्दों पर हक जमाने लगी हैं....

कुन्दनलाल ने कहा—शशि बहन मुझ पर हक जमाने लगी है ? इस बात से मेरा तन-बदन जल उठता है। शशि की मित्रता दैवी मित्रता है जो मेरे संसार को आलौकिक कर रही है। उसने मेरे जीवन को बदल डाला........ बदल डाला......'

विधुमुखी बोली—'हाँ बदल डाला। जो तुम पहले थे, अब वह नहीं रहे।

मेरी शक्ल तुम्हें अच्छी नहीं लगती…मेरी बातों में तुम्हें रस नहीं मिलता।'

कुन्दनलाल—'तुम मेरे स्थूल शरीर की भौतिक जीवन की संगनि हो और शशि बहन मेरी दैवी जीवन की ज्योति……'

विधुमुखी—'ठीक है, में भी अब कोई शशि भाई ढूँढ लूँगी, जो मेरे जीवन की दैवी ज्योति बने…।'

कुन्दलाल—'पागल हो गई हो ? पवित्र देवी को कलंक लगाती हो !'

विधुमुखी—'मेरे प्राण चाहे निकल जायें, पर उस देवी को कलंक न लगे …किसी से विवाह कर-मर ले तो हम जैसियों की बला तो टले……'

कुन्दनलाल—'खबरदार ! जो अब एक भी शब्द निकाला तो…मन में जो आये सो कर, पर उसके विरुद्ध मैं एक शब्द भी नहीं सुन सकता ।'

विधुमुखी—'हाँ अब मुझे भी जो अच्छा लगेगा, करूँगी। मैंने भी अपनी दैवी जीवन-ज्योति ढूँढ ली है। मुझे रत्ती-भर परवाह नहीं।'

विधुमुखी सिसक-सिसककर रोने लगी और फिर कहने लगी—

'हम घर में बैठी रहें और तुम बाहर जीवन-ज्योति के संग रगरेलियाँ मनाओ। वर्षों तक जो भक्ति-भाव से उपासना करती रही; उसका कोई मुल्य नहीं ? अब मैं वही करूँगी जिससे हमारा कुछ मूल्य-मान हो।'

कुन्दनलाल ने खीझ-भरी हँसी से कहा—' जो तेरे जी में आये तू कर

रोकता कौन है ! मुझे ही डराने चली है !'

विधुमुखी बोली—'अब आए सीधे रास्ते । जब स्वतन्त्र हो मेरी स्वतन्त्रता में बाधक बनने का तुम्हें क्या अधिकार है ?'

विधुमुखी क्रोध रोष और गर्व से कुलबलाती चली गई तो कुन्दनलाल तिरस्कार-भरे स्वर से आप-ही-आप कहने लगा—'इस स्त्री से तो मैं तंग आ गया । कहाँ शशि औरकहाँ यह ? यह धरती की है और वह दैवी ।'

'पता नहीं यह जलती क्यों है ? शशि······जीवन का जो आनन्द शशि के साथ है, संसार की समझ में वह नहीं आ सकता ।'

इसी तरह ऊहापोह में व्यस्त कुन्दनलाल ने अचानक देखा कि दुर्लभराम इन्द्रजीत को साथ ले आया है ।

थोड़ी देर तीनों में बातें होती रहीं, जिनका निष्कर्ष यह था कि आज रात को साढ़े आठ बजे सेठ मनहरलाल की जूहू तट वाली कोठी पर भोजन के लिये बहुत से लोग इकट्ठे होंगे । शिवगौरी भी आमन्त्रित है । इन्द्रजी वहाँ आ जाय और शिवगौरी को ले उड़े ।

इन्त्रजीत की मदद के लिए एक मोटर उसके साथ दो पठान गुण्डों का प्रबन्ध दुर्लभराम कर देंगे । दूसरी मोटर में दुर्लभराम के साथ बल्लभराम होंगे ।

इस योजना से सबको खुशी हुई । केवल इन्द्रजीत का मन रह-रह कर शंका से भर उठता था । पर दुर्लभराम और कुन्दनलाल दोनों ने ही उसे दृढ़ करने के लिए साहस दिलाया ।

ये तीनों अभी बैठे बातें ही कर रहे थे कि विधुमुखी नई साड़ी में

सभी आ पहुँची। बोली—'पिक्चर देखने जा रही हूं।' कुन्दनलाल ने क्रोध और घबराहट से झुँझलाकर पूछा—किसके साथ ?' विधुमुखी ने लापरवाही से कहा—'अभी इसका निश्चय नहीं किया।' और वह उत्तर की परवाह किए बिना चली गई। कुन्दनलाल उसे पुकारते ही रह गए और दुर्लभराम तथा इन्द्रजीत उसे भयविस्मित दृष्टि से देखते रह गए।

दुर्लभराम ताड़ गए कि क्या माजरा है। बोले—'सब समझ गया··· हमने कोई धूप में बाल सफेद नहीं किये। वकील साहब ! स्त्री को खूँटे से बाँधकर ही रखना चाहिए।'

कुन्दनलाल खिसियाना होकर उसे बाहर देखने को लपका। परन्तु वह दृष्टि से ओझल हो चुकी थी।

कुन्दनलाल के मन में लज्जा, भय, विस्मित, शंका के भाव एक साथ उदय हुए। क्रोध भी कुछ कम नहीं था—'यह मूर्खा नारी, जान पड़ती है, मुझे भयभीत करना चाहती है। आज तक अकेली कहीं नहीं गई और पर-पुरुष के साथ ?···इसकी तो कल्पना भी इसके लिए असम्भव थी···आज इसे हो क्या गया है ? पुलिस स्टेशन टेलीफोन करूं···इसमें तो मेरी बेइज्जती हो जायेगी। पिक्चर हाऊस जाकर देखूँ ? पर क्या खबर कौन से पिक्चर हाऊस गई है ?'

कुन्दनलाल सिर पीट और बाल नोचकर रह गए। कुछ उपाय न सूझा। कुछ क्षण बाद शिवगौरी को टेलीफोन किया।

पूछने पर पता चला कि विधु मोतीराम के साथ पिक्चर देखने गई है। पर कहाँ, यह उसे भी मालूम नहीं।

मन में सोचने लगा—'तभी कुछ दिनों से इसका उनके घर ज्यादा जाना बढ़ गया है और मोतीराम भी बहुत आने लगा है।

फिर मन ही मन सोचा—'यह विधु पर अत्याचार है। दस वर्ष से वह मेरी अनन्य भक्ति करती रही है, मैं उसे खूब जानता हूं। उसकी आत्मा निष्पाप है। वह मेरे लिए परम दुखी है।'

इसी समय शशि की मूर्ति उसकी आंखों के आगे नाचने लगी। वह अद्‌भुत है। उसके नयनों से तेज की वृष्टि-सी होती है।

पल-भर में ही उसे फिर ध्यान आया। उसकी पत्नी सिपाही मोतीराम के साथ पिक्चर देखने गई है। वाह रीं आज की नारी। पति तो घर में झक मारे और आप···और आप···

कृतघ्न···ओह रात के तीन बज गये !····भाग गई कुलटा···कुल को दाग लगाकर चली गई—'मेरा संसार नष्ट कर गई···'

एकाएक घन्टी बज उठी। द्वार खोलकर देखा तो विधु खड़ी थी। तेजी से अन्दर जाने लगी तो कुन्दनलाल ने क्रोध से पूछा—

'कहाँ गई थी ?'

'पिक्चर।'

'इस वक्त तीन बजे हैं।'

'तुम्हें इससे मतलब ?'

'मुझे मतलब नहीं ?···कुत्ती कमजात···'

'तुम तो मेरी स्थूल देह के संगी हो।'

'बोल किसके साथ गई थी ?'

'अपनी दिव्य जीवन-ज्योति के साथ।'

इतना कहकर बाँह छुड़ाकर गर्व-भरी मुद्रा से तिरस्कारपूर्वक देखती हुई वह भीतर चली गई।

कुन्दनलाल पीछे-पीछे दौड़ा, पर उसने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया।

इसी समय पीछे से कुन्दनलाल आ गया। सोचने लगा—विधु और मोतीराम फिर दोनों—इकट्ठे। अब मुझे कोई रुकावट नहीं रही। जो स्वयं पराये-पुरुष से मिल सकती है, वह मुझ पर क्या बन्धन लगा सकती है? अब तक तो मेरे मन में आता था कि विधु यदि प्रसन्न हो जाय तो शशि का फिर कभी नाम भी न लूँगा। पर अब कुलटा! ले अब मेरा कर्त्तव्य समाप्त है, मैं स्वच्छन्द हूं...।'

कुन्दनलाल चला गया। मोतीराम विधु को धीरज बंधा रहे थे। पर विधु को कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था।

इतने में शशिकला गीत गुनगुनाती हुई आई। फिर सोचने लगी—'आज क्या बात है, सभी परिवर्तित से लगते हैं। गुलाबदास का मेरी ओर क्रोध से देखना, कुन्दनलाल और विधु की रोती शक्लें, कवि गौरी-शंकर और शिवगौरी की उदासीं—बात क्या है? सारी मण्डली ही आज बिगड़ी-सी लगती है। किसी के पास जाकर हर्ष और प्रमोद पाने की आशा नहीं होती। चाचा इतने उदास हैं कि जैसे पहले कभी नहीं देखे। आज मुझसे बहुत बुरा हुआ। वे कितने भोले हैं—कितने अच्छे! न जाने क्यों ऐसे शुभ अवसर पर मेरे मुख से उल्टी-सीधी बातें निकल गईं। पर मैंने ऐसी भी क्या बड़ी बात कह दी—उन्होंने मुझे वेश्या तक कह दिया और मैंने सहन किया। जब उन्होंने मुझे शिक्षित बनाया [illegible]ा मैं हिसाब माँगने का भी अधिकार नहीं रखती? अबवे दिन [illegible]ए कि स्त्रियाँ चुपचाप जो कहो मान लेंगी—जैसा करो—सिर [illegible]र स्वीकार करेंगी। चाचा देखेंगे कि मैं स्वतन्त्र हूं।' पर स्वेच्छा-

चारिणी नहीं हूं । मेरी आत्मा ऊँची है, स्वतन्त्र नारी की आँत्मा वेश्या की नहीं···

'वेश्या शब्द का ध्यान आते ही शशि को आग-सी लग गई । पर उसने अपनी भावुकता को विचार-बल से दबाने का प्रयत्न किया और चाचा के प्रति दुर्भावना मन में न लाने का निश्चय किया ।

सामने ही चाचा मिल गये । मुख पर गाम्भीर्य था । हास्य-व्यंग्य का पुट न था । शशि ने क्षमा-प्रार्थना करते हुए कहा—'चाचा ! आज मुझसे भूल हो गई । आखिर मैं बच्ची ही तो हूँ ।'

'नहीं शशि ! तू बच्ची नहीं है पूर्ण युवती है; मैं ही वृद्ध हो गया हूं । मेरी यही एक कामना है कि तेरा जीवन सुन्दर रूप से व्यतीत हो ।' चाचा ने कहा ।

वेदना-मिश्रित दृष्टि से शशि बोली—'ओह चाचा ! भला तुम्हारे बिना मेरा निर्वाह हो सकता है ?'

चाचा बोला—'यदि मैं तुझे अपने आधीन रखना चाहता तो इतनी शिक्षा क्यों दिलाता ? तुम्हारा धय पृथक रूप से क्यों जमा करवाता ? पुराने विचारों का होकर भी तुम्हें पूर्ण स्वतन्त्र देखने की इच्छा क्यों करता ? अब भी हम चाचा-भतीजी का सम्बन्ध निभायेंगे, पृथक-पृथक रह कर···'

शशि ने उसाँस लेकर कहा—'चाचा, आपके खेद भरे स्वर से मेरा हृदय काँपता है । तुम्हारे असंख्य उपकार क्या भुला देने की वस्तु है, जो कुछ मैं हूं—सब तुम्हारी बनाई हुई हूं । मैं कृतघ्न नहीं हूं ।'

मनहरलाल कुछ देर मौन रहकर बोला—'शशि उपकार कहकर मुझे पराया बनाने का प्रयत्न ही मुझे असहनीय नहीं है । भूल जाओ कि

मैंने तुम्हारे लिये कुछ किया है। मैं सम्मानित जीवन व्यतीत करते देखना चाहता हूं, तुम्हारे धन्यवाद की मुझे कामना नहीं···आगे तुम्हारा मार्ग और है, मेरा और···।'

शशि भावावेश में बोली—'नहीं चाचा ! नहीं, ऐसा कभी हो सकता है ?'

मनहरलाल कहने लगा—'शशि ! ऐसा होने का समय आ गया है। मैंने एक लिफाफा गुलाबदास को तुम्हारे लिये सौंपा है। नये घर में प्रवेश करने के उपरान्त उसे पढ़ना।'

शशि ने उत्सुकता से कहा—'क्या हैं उसमें ? मैं अभी दौड़कर उसे लाती हूं और तुम्हारे सामने पढ़ती हूं।'

वह दौड़ी-दौड़ी बंगले में घुस गई। मनहरलाल ठंडी आह भरकर वहीं धम्म से बैठ गया। सोचने लगा—'आज सारे जीवन की आशाएँ धूल में मिल गईं।'

स्मृतिकारों ने कहा था कि कन्या को बाल्यवस्था में ही ब्याह दो। पर पश्चिमी विचारधारा के स्वतन्त्र वायु झकोरों ने स्त्री को जगाया—जगाया। क्या वह नागिन की तरह फन उठाकर खड़ी हो गई ?··· पश्चिमी-विचारधारा ने भारतीय मूल्यों एवं आदर्शों को एक बार ही उखाड़ फेंकने का प्रयत्न किया। अब न जाने हमारे जीवन का भवन किस तरह ध्वस्त हो जाय ! इससे तो शशि को इतनी शिक्षा ही न देता। पर इसके लावण्यमय नन्हे-नन्हे नयन मुझे बाध्य कर रहे थे कि मैं इसके विकास का पूर्ण प्रयत्न करूँ। इसके पालन-पोषण में मैंने कुछ उठा न रखा। यह सब मैंने इस पर अपना आधिपत्य जमाने के लिये नहीं किया। अधिकारों की भाषा शशि की भाषा है, शिवगौरी की भाषा

है, मनहर की नहीं। मैं तो कर्तव्य-बुद्धि और आत्म-त्याग की भाषा समझता हूं। पर मेरा भविष्य निराशा से अन्धकारमय है···अकेले बूढ़े होकर एक दिन···एक दिन मर जाऊंगा···।'

शिवगौरी की आवज से मनहरलाल चौंक उठा। आँसूओं को शीघ्रता से पोंछकर चेहरे पर मुस्कान लाने का प्रयत्न करता हुआ मन-ही-मन कहने लगा—'ओह यह शूर्पणखा कहाँ से आ टपक पड़ी!'

शिवगौरी ने नयन नचाते हुए कलामय ढंग से कहा—'ऊपर आकाश नीचे धरती—मुझे भी स्वच्छन्द वातावरण भाता हैं।'

मनहरलाल ने उत्तर में कहा—'ओह शिवगौरी बहन! तुम तो कविता करने लगीं। मेरे सिर में दर्द था, इसलिये खुले में चला आया।'

शिवगौरी बोली—ओह सिर में दर्द है, तो बाम लाऊँ। नहीं तो घूमने से ठीक हो जायगा। आओ तनिक घूमें। तुम जीवन में अकेले हो···न!'

हँसकर मनहर ने कहा—'मुझे अकेले रहना ही भला लगता है।'

शिवगौरी ने नयन नचाते हुये कहा—'यह सब ऊपरी बातें हैं—हृदय टटोल कर देखो तो कोई भी एकाकी जीवन पसन्द नहीं करता।'

मनहरलाल ने व्यंग से कहा—'तो फिर तुम क्यों अकेली रहती हो! तुम विवाहित हो, नहीं तो हमें यों बातें करते देखकर कोई सोचेगा कि शायद ये परस्पर विवाह···।'

शिवगौरी—'दो आत्माओं के संयोग के लिए विवाह कोई आवश्यक वस्तु नही है।'

मनहरलाल—'यह तो **Platonic Love** के पंथियों की बात है।,

शिवगौरी—'तुम तो हरएक बात की हँसी उड़ाते हो·। **Platonic Lvoe** को मैं अस्वास्थ्य का चिन्ह मानती हूं। तुम्हारी आत्मा से मेरी आत्मा का संयोग परमेश्वर ने ही कर दिया है···।'

मनहरलाल ने बीच में ही टोककर कहा—'न-न ! तुम प्लेटों को मानती हो और मैं अरस्तु को···और जानती हो उसका क्या सिद्धान्त है कि स्त्री पति के घर न जाए तो उसकी नाक–कान काटकर···।'

शिवगौरी ने दोनों हाथ कानों पर रखलिए और भनभनाती वहाँ से चली गई ।

दुर्लभराम इन्द्रजीत को वहाँ पकड़ कर घसीटते हुए लाये । पर दुर्लभराम जितना ही उसे उत्तेजित और उत्साहित करता था उतना ही वह शिथिल होता जाता था । शिवगौरी को दूर से देखकर ही वह काँपने–सा लगा । दुर्लभराम उसे आगे को ढकेलते थे और वह पीछे को घिसटता । जैसे–तैसे धीरज बाँधकर वह शिवगौरी को अप–हरण करने के लिए तैयार हुआ । दुर्लभराम जाकर मोटर में बैठ गया । पर इन्द्रजीत के मन का भय उसे कचोट रहा था । वह आज़ 'गोविन्दा' का पाठ करते हुए धीरज बाँधने का प्रयत्न कर रहा था ।

इसी समय उधर से ध्यानमग्न कुन्दनलाल आ पहुंचे । कुछ बड़बड़ा रहे थे ।

इन्द्रजीत ने सुना तो चकित रह गया ।

कुन्दनलाल कह रहा था—

'···शशि ! ओह मेरी देवी प्रेरणा–मूर्ति ! शब्द–शब्द में प्रेम भरे, वह मधुवर्षण करता है । आ मेरी शशि ! मैं विधुमुखी को उसके मायके भेज दूंगा । शशि मेरी प्राणों की अधीश्वरी ! तेरे अंग–

प्रत्यंग से लावण्य की छटा छिटकती है। सलोने नयन मधुर अधर, सरोज से उरोज···

इन्द्रजीत मन ही मन हँसने लगा और शंकराचार्य का श्लोक उसे याद आ गया—

'नारी स्तन भर नाभि निवेशम्'
मिथ्या माया मोहावेशम्
(व्यर्थ है नारी का स्तनभार
वृथा है उसका नाभिनिवेश
सभी मिथ्या हैं, मिथ्या है।)
सामने से कौन आ रही है—अच्छा शशि !

शशि कुन्दनलाल के पास आकर पूछने लगी कि चाचा और गुलाब दास कहाँ हैं। कुन्दनलाल ने उत्तर दिया, 'सम्भवहै वे नाराज हो गये हों, क्योंकि आज प्रातः हमने उनसे हिसाब-किताब करने की बात की थी।'

शशिकला ने टोकते हुए कहा—'कुन्दनलाल, तुम मेरे मित्र हो। चाचा के प्रति ऐसे विचार मत रखो महान् हैं वे। एक बाम बताऊँ ? मेरे जी में आता है कि चाचा ने अब तक इसीलिए विवाह नहीं किया कि कोई स्त्री आकर मुझे दुखी न करे।

कुन्दनलाल बोला--'तुम्हारा जैसा हृदय साफ है, वैसा ही दूसरों का समझती हो। मुझे तो लगता हैं कि चाचा का तुम से ब्याह करने का इरादा था।'

शशिकला ने अट्टास करते हुए कहा—'छिः मूर्ख—तुम बिलकुल अनगढ़ मूर्ख हो। वकील हो न—वकीलों जैसी ही दलील करोगे। यदि चाचा मुझसे ब्याह करना चाहते थे तो किया क्यों नहीं ?'

कुन्दनलाल ने आँखें तरेरते हुए कहा—'ओह मेरी भोली रानी ! तुम्हारे जैसी **cultured** स्त्री ऐसे आदमी से ब्याह करना कैसे स्वीकार कर सकती थीं ?'

शशिकला को बात कुछ जमी नहीं ।

कुन्दनलाल ने शशि का हाथ पकड़ते हुए कहा--'शशि ! तुमसे एक प्राइवेट बात करनी है । तुम्हारे भावों से एक अपूर्व समरसता है । आज मैंने जीवन से, हृदय से विधु को बहिष्कृत कर दिया है ।'

शशिकला—'तुम कहते क्या हो ? क्या वैरागी होने जा रहे हो ?'

कुन्दनलाल—'अरे नहीं···मेरी-तुम्हारी मित्रता में अब व्यवधान नहीं रहा । तुम भी स्वतन्त्र हो, मैं भी स्वतन्त्र ! मेरे जन्म–जन्मान्तर की तृष्णा मिटेगी । तुम्हारा सहवास मेरे जीवन की मुक्ति होगा ।'

शशिकला ने जोर से हाथ छुड़ा लिया और बोली—'कुन्दनलाल ! तुम होश में हो ?'

कुन्दनलाल ने नयनों में याचना भरते हुए कहा—'हाँ अब मुझे होश हुआ है । तुम्हारे नयनों के रस–प्यार का मैं प्यासा हूं, तुम्ही मेरी प्राणाधार हो प्राणप्रिये !···

शशिकला ने गर्जना के स्वर में कहा—'पागल हो गए हो या शराब पी रखी है ?'

कुन्दनलाल ने भिक्षुक स्वर में कहा—'हाँ तुम्हारे प्रेम की सुरा-पान की है ।'

शशिकला कड़कते हुए बोली—'खबरदार ! जो अब एक भी शब्द मुँह से निकाला····'

कुन्दनलाल खलनायक की तरह पास आकर घुटने टेककर प्रेम-भिक्षा की याचना करता हुआ बोला—

'मैं तुम्हारे इस कृत्रिम रोग का अर्थ समझता हूं। स्त्री की ना का अर्थ है हाँ। 'धरी जब बाँहि, करी तुम नाहिं'...'

शशिकला जल उठी। बोली—'नीच! दुष्ट! पाजी!'

कुन्दनलाल उठ खड़ा हुआ। आँखें निकाल कर कहने लगा...'तो तू मेरे हृदय के साथ खेल कर रही थी?'

शशिकला—'हाँ! क्रीड़ा...दो हृदयों की निष्पाप क्रीड़ा। और नहीं तो क्या मैं तुम्हारी मूरत पर मोहित हो गई थी? निकल जा पापिष्ठ! दूर हो जा यहाँ से ...'

वह भनभनाती चली गई। कुन्दनलाल पसीना-पसीना हो गया।

इन्द्रजीत ने यह सारा नाटक देखा। वह हँसता हुआ कुन्दनलाल के सामने आकर बोला—'अरे मिथ्या है यह संसार अकेला प्रभु नाम आधार कहो दोस्त!...'

इसी समय विधुमुखी आ पहुँची। वह पति की दशा देखकर आतंकित हो गई। उसे बाँह से पकड़ कर ले गई।

कुन्दनलाल ने इस समय विधुमुखी को पाकर मानो देवी के दर्शन पा लिए। बोला—'क्या तुम मुझे अब भी एक सज्जन पुरुष समझती हो?'

विधुमुखी ने उसकी चरणरज माथे पर लगाकर कहा—'नाथ! तुम्हीं मेरे प्राण, मेरे जीवन, मेरे सर्वस्व हो, मेरा अणु-प्रमाणु मेरा

मन, मेरी आत्मा, सबके तुम्हीं अधीश्वर हो। तुम्हें छोड़कर मैं सपने में भी किसी पुरुष को ध्यान में नहीं ला सकती। भगवान वह दिन दिखलाने से पहले ही मौत दे दे···'

कहते-कहते विधुमुखी ने पति को आलिंगन-'पाश में आबद्ध कर उसका चुम्बन लेते हुए कहा—'मेरे देवता !'

६

शिवगौरी को समीप आते देखकर इन्द्रजीत के हृदय की धड़कन बढ़ने लगी। वह शिवमन्त्र का पाठ करते हुए प्रार्थना करने लगा। शिवगौरी अपनी ही धुन में मस्त बड़बड़ा रही थी—'मेरा जीवन नष्ट कर दिया! मेरा यौवन बेकार हो गया। मेरी आकांक्षायें···'इसी समय दूर से इन्द्रजीत की परछाई देखकर वह उसे भूत समझी। उधर से गंगा बहन आ पहुंची।

शिवगौरी उससे कहने लगी—'अरे अभी मैंने उस मर्दूद का भूत देखा है।'

गंगा बहन ने कहा डर गई ?'

शिवगौरी ने उत्तर दिया—'मैं, और डर जाऊँ ? मैं तो उसकी चटनी बनाकर रख दूँ······'

इन्द्रजीत ने शिवगौरी के यह शब्द सुन लिये। उसने दुगुने वेग से शिव-पाठ करना शुरू किया।

गंगा बहन ने कहा—'पर वह गधा कहाँ गया, जो बड़ा सेठ बना फिरता है।'

शिवगौरी ने जलकर कहा—'उसने मेरा अपमान किया है। अब—

सर मिलने पर मैं इसका उत्तर शेर का सवा शेर दूँगी। मैंने अफलातूनी प्रेम की चर्चा की तो जानती हो उसने क्या कहा—उसने कहा कि जो नारी पति के घर न जाये उसकी नाक कान काट कर…'

इन्द्रजीत ने मन-ही-मन साधुवाद दिया और सोचा कि ऐसे ही धर्मात्माओं के आसरे यह धरती टिकी हुई है।

शिवगौरी क्रोधावेश में भनभनाती रही……गधे पर बिठायेगा…। यह मुझे गधे पर बिठायेगा ! अपनी उस छोकरी को गधे पर बिठाये…। मुझे इतना गुस्सा आया कि जी चाहता है कि…किसी का सिर फोड़ डालूँ।

इन्द्रजीत ने शिवगौरी का यह मूड देखा तो उसके देवता हवा हो गए अपहरण की तो दूर रही—वह जान बचा कर भागा।

दुर्लभराम ने उसे भागते देख, उसका पीछा करने का यत्न किया, पर व्यर्थ।

शशिकला ने चाचा का पत्र पढ़ा—'शशि ? प्रातःकाल तुमने जो बात कही थी वह सत्य है। मुझे सम्पत्ति का आधा भाग तुम्हें देना चाहिये। मैंने सब कागजात गुलाबदास को दे दिये हैं। वह तुम्हें सब समझा देगा।'

शशि मन-ही-सम चाचा की उदारता की प्रशंसा करने लगी—'धन्य है, चाचा ! अपनी बीस वर्ष की कमाई में से आधा हिस्सा मुझे देने का निश्चय ! …चाचा तुम देवता हो। मैं यह कभी भी स्वीवकार नहीं करूँगी।'

गुलाबदास के आने पर शशि ने कहा—चाचा ने यह ठीक नहीं किया…'

गुलाबदास ने पान चबाते हुए कहा—'आजकल की छोकरियाँ…जब बेचारे ने आठ लाख अपने-आप दे दिया तो उससे आधा माँगती है। वह आदमी खरा सोना है। जरा सोचो तो—तुम्हारे मुँह से आधी सम्पत्ति के बटवारे की बात सुनकर उसे कितनी पीड़ा हुई होगी। सज्जनता का आज यही फल है…'

शशिकला बोली—'गुलाबदास! मैं तो अपना अधिकार ही मांगती हूं। एक पाई कम-ज्यादा नहीं…'

गुलाबदास ने भड़ककर कहा—'मुझे गुस्सा न चढ़ा। मनहर तो मेरे बेटे-जैसा है, इसलिये उसकी बात रखनी पड़ती है, नहीं तो तेरा अधिकार…'

शशिकला ने उग्र होकर पूछा—'क्यों मेरे पिता का धन ?…' गुलाबदास ने बात काटकर कहा—'तेरे बाप-दादा किसी ने देखे भी हैं। तू जानती नहीं… जब बेटा मनहर तुझे बम्बई लेकर आया था तो तू केवल दो वर्ष की बच्ची थी…तन के कपड़े बेचकर इसने तुझे दुध पिलालया…कपड़े की फेरी करके तुझे पाला-पोसा। मेरे बड़े भाई ने उसे फेरी के लिये रुपये दिए। यह तो इसकी नेकनीयती है, जिससे आज यह सेठ बन गया और तू भी सम्पत्ति का बटवारा मांगने लगी—अधिकार जमाने लगी। वाह रे जमाना! इस दुनियां में आज जीने का धर्म नहीं रहा। अच्छा जाता हूं। घोर कलयुग आ गया।'

गुलाबदास चला गया।

शशि के काटो खून नहीं। आँखों में आँसू उमड़ आए। वह शर्म के मारे मरी जा रही थी।

कवि गौरीशंकर ने दूर से शशि को देखा तो उसकी कवि-प्रतिभा चमक उठी। पास आकर कहने लगा---'ओह ! इधर शशि और आकाश में चन्द्रिका ····इन्हीं क्षणों की प्रतीक्षा में मेरे प्राण आकुल थे। मैं, शशि, समुद्र और चन्द्रमा चारों का अपूर्व सँयोग···'

शशिकला झुंझला उठी।

गौरीशंकर अपनी ही धुन में कहता गया—मेरी और तेरी आत्माएँ इस संसार-सागर के तट पर सारस के जोड़े की भाँति···

शशिकला ने शुष्क स्वर में कहा—'इस समय मेरे सिर में दर्द हो रहा है।

गौरीशंकर नम्रता से बोला—'एक प्रार्थना है···कल तुम स्वाधीन हो जाओगी···मेरे हृदम का शून्य मन्दिर तुम्हारे लिए रिक्त है। तुम वहाँ अधिष्ठात्री देवी बनकर आसीन होओ।

अब असह प्रतीक्षा हुई सुमुखी
अब असह तुम्हारा ध्यान हुआ।'

शशिकला ने तुनककर कहा–'साफ-साफ कहो—तुम्हारा मतलब क्या है ?'

गौरीशंकर ने दुराशा-भरे स्वर में कहा—'मेरी याचना चिरन्तन होते हुए भी चिरनवीन है। सृष्टि आरम्भ से यह मौन निमन्त्रण आत्मा की झंकार रहा है।'

शशिकला ने सिर पकड़ लिया और बोली—'मुझे तुम्हारी बात कुछ समझ नहीं आ रही। अब' कल मिलेंगे।'

शशिकला उठकर जाने लगी, पर गौरीशंकर ने धृष्टतापूर्वक उसे दोनों बाँहों

दोनों बाँहों से पकड़कर खींच लिया। कहने लगा—'बैठो शशि, जाओ मत। मेरे हृदय की झंकार सुनो।'

शशिकला ने क्रोध-भरे स्वर में कहा—'बेवकूफ छोड़ दे मेरे हाथ। तू मुझसे प्रणय करेगा? शीशे में मुँह देखा है? निर्लज्ज कहीं का···सीधे यहाँ से दफा हो जा, नहीं तो नौकरी से तुझे धक्के भरवाकर···

गौरीशंकर का हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया। सामने देखा तो मनहर-लाल मुसकरा रहे थे।

गौरीशकर उससे सहायता की याचना करते हुए बोला—'यह रमणी अपने मृदु हास्य से मुझे निमन्त्रण देती रही। इस समय वचनों से लोभित करती रही। मैं विवश हो गया। मैंने अपने हृदय को उसके चरणों पर अर्पित कर दिया। अब यह मुझे ठुकरा रही है।'

शशिकला ने काँपते हुए कहा—'आग लगे इसके मुँह में··· मरा···

मनहरलाल ने सहास कहा—वह तो प्रेम से इनकार करती है।'

गोरीशंकर भावुकता में बोला—'आह मेरी हृदय-कलिका कुचल डाली! मैं इस पर कविता···नहीं, नहीं महाकाव्य लिखूंगा कि इस रमणी ने मेरे प्राणों को आकर्षित करके ऐसा प्रहार किया···मेरे रोम-रोम से करुण आह निकलेगी।'

मनहरलाल से न रहा गया। कठोरता से धक्के देते हुए बोला—अब तुम जाओगे भी?'

आकाश की ओर देखता, दुहाई देता हुआ कवि विदा हुआ।

शशि और मनहरलाल दोनों को ही इस घटना से अत्यधिक खेद हुआ ।

मनहरलाल शशि से विदा माँगने लगे तो शशि ने उन्हें रोक लिया । बोली —'चाचा ! तुम अभी नही जा सकते । तुम्हें मेरी सौगन्ध । यह बताओ कि तुमने मुझे आधी मम्पत्ति बंटवारे में क्यों दी ।'

सखेद स्वर में मनहरलाल बोला—

'शशि ! मुझे खेद है, मैं तेरे पिता की चौथाई पूँजी लगाकर उसके हिसाब से तुझे आठ लाख दे रहा था, पर वह मेरी भूल थी । अब मैं तुझे बराबर सम्पत्ति बाँटकर तुझसे न्याय कर रहा हूं। अच्छा मैं चलता हूं ।'

शशिकला ने रोषपूर्बक कहा—'बैठते हो या नहीं ? मुझे सच-सच सारी बातं बताओ । मुझे तुम्हारी धन-सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं । मैं बँटवारा भी नहीं चाहती ।'

यह कहकर शशी ने दस्तावेज के टुकड़े टुकड़े कर दिये ।

फिर भावुकता से बोली—'मुझे सब पता चल गया है । कपड़े बेचकर मुझे बम्बई लाये और टोपी बेच कर मुझे दुध पिलाया•••मुझे पूरा हाल सुनाते हो कि नहीं ?'

मनहर ने बात टालने के लिए कहा—'गुलाब दास ने कहा होगा वह निरा पागल है । शशी ! मुझे जाने दे । मैं कल बताउंगा ।,

शशीकला ने चाचा के दोनों हाथ पकड़ कर और आँखों में रोष भरकर कहा—'नहीं, मैं तुम्हे जाने न दूँगी । पहले मुझे सारा किस्सा सुनाओ । मैं कौन हूं ? तुम्हारा मुझ से क्या संबंध है ? मेरे पिता कौन थे ?'

मनहर लाल की आँखों में आंसू प्रबल वेग से उमड़ आये । बोला...

'शशि ! ⋯ इस समय मुझे जाने दे। मुझे जाने दे। मुझमें इतनी शक्ति नहीं कि तुम्हें सब-कुछ बताऊँ।'

अधिकारपूर्वक शशि बोली—'तुम्हें मेरी कसम। मुझे इसी समय सब-कुछ सुना दो।'

मनहरलाल ने पीछा छुड़ाने की कोशिश की, पर शशि की हठ के आगे एक न चली। हारकर उसे सारी कथा सुनानी पड़ी—

'मैं एक गाँव में रुपया वसूल करने गया था। उस गाँव में किसी अन्य गाँव का एक स्कूल मास्टर रहता था। वह बड़ा ही झगड़ालू था। दिन चढ़ते ही सबसे पहले मैं उसके घर तकाजा करने पहुँचा। मैंने दरवाजा खटखटाया, पर उत्तर न मिला। मेरा माथा ठनका। मैं दीवार फाँदकर भीतर गया तो वहाँ का दृश्य देखकर मेरे होश उड़ गये। देखा कि मास्टर की औरत बिस्तर पर लहू से लथपथ मरी पड़ी थी। प्रतीत होता था कि उसका पति उसकी हत्या करके भाग गया है।

'फँस न जाऊँ, इस डर से मैंने वहाँ से भागने की ठानी कि इसी समय मेरे कानों में आवाज पड़ी—'चाचा' और वह आवाज तुम्हारी थी और तुम उस समय केवल दो वर्ष की थी।⋯

'मैं तुझे छोड़कर भाग जाना चाहता था, पर तूने दोनों हाथ फैलाए। मैं कुछ कदम दौड़ा, पर तुम्हारी आवाज फिर आई 'चाचा' और तुम मुस्कराई और मैं तुम्हें छोड़कर न जा सका। मैं तुझे हृयय से लगा लिया और कन्धे पर बिठाकर वहाँ से बम्बई भाग आया। कपड़े बेचकर बम्बई का किराया इकट्ठा किया था। बम्बई पहुँचकर तुम भूख से रोने लगीं तो टोपी बेचकर तुम्हें दूध पिलाया। मैं तेरे साथ खेलता बातें करता, तुझे हँसाता।'

मनहरलाल ने कथा आगे बढ़ाते हुए कहा— मैं गुलाबदास के बड़े भाई के यहाँ नौकर हो गया। उन्होंने उदारतापूर्वक तुम्हारे पालन-पोषण का प्रबन्ध किया मैं उनके भांडे माँजता, वस्त्र धोता, बच्चों को स्कूल छोड़ने जाता। रात के समय तुझे मिलता और तब तू गले से चिपट कर सोती।

'इसके बाद क्या हुआ ? थोड़े दिन में यही कि मालिक मुझ पर प्रसन्न हो गए। उन्होंने ने मुझे दो सौ रुपये देकर कपड़े की फेरी करवाई। लक्ष्मी ने मुझ पर दया-दृष्टि की और आज...।

शशि की आँखों में झर-झर आँसू बह रहे थे। फिर बोली—'चाचा' रुपए में चार आने मेरी पत्ती क्यों रखी, मेरे पिता के हिस्से की झूठी बात क्यों गढ़ी ?

मनहरलाल बोला—' शशि ! इसका एक कारण था। मैं चाहता था कि तुझ पर इस बात की परछाई भी न पड़े कि तू निराश्रय है। और तेरे सगे सम्बन्धी कोई नहीं। मैं तुझे आदर्श नारी बनाने हेतु तुझे ऊँची शिक्षा दिलाने के लिये प्रयत्नशील रहा। मैं चाहता था कि बड़ी होने पर तू अपने-आपको दीन-हीन न समझे।'

शशिकला ने प्यार-भरे-स्वर में कहा—'ओह मेरे अच्छे चाचा !'

मनहरलाल उठकर चला जाना चाहता था, पर शशि ने उसे बलपूर्वक फिर से बैठा लिया और कहने लगी—'अभी तो बहुत कुछ पूछना बाकी है। सच-सच बताना, मेरे ऊपर तुम्हारा इतना स्नेह उमड़ पड़ा—इसका कारण ? ...ठीक...बताना...झूठ बोलो तो तुम्हारी शशि के रोम-रोम में कीड़े पड़ें !'

मनहरलाल दुखित स्वर में बोला—

'शशि !···मैं अकेला था···न माँ, न बाप, न परिवार, न रिश्तेदार। मेरे सेठ की दुकान ही मेरा संसार था। संसार में मुझसे किसी ने स्नेह नहीं किया था। केवल तू ही मुझसे हँसकर बोली थी मेरे असहनीय एकाकीन में, जहाँ मैं शव की तरह पड़ा हुआ था, तू उसी तरह आई जैसे पिपासाकुल को अमृततुल्य जल-बूंद मिली हो। तुम्हारी तोतली बोली से मुझे धनोपार्जन की प्रेरणा मिली थी। तेरी हँसी से मेरा जीवन विकसित हो उठता था।'

शशिकला ने पूछा—'तो मुझे अलग क्यों कर किया और मेरे लिए धन का भाग क्यों निकाला ?'

मनहरलाल ने तनिक उग्र स्वर में कहा—'मैं तुझे आदर्श नारी बनाना चाहता था। तुझे स्वतन्त्र करने से तू अपूर्व रूप में पूर्णता को प्राप्त करेगी, इसलिये तुझे अलग कर दिया। और कुछ पूछना है ?···'

मनहरलाल उठकर जाने लगा। शशि उसके सामने आकर खड़ी हो गई और उसके कान पकड़कर बोली—'अब बोल रे बूढ़े चाचा ! एक प्रश्न और है, अब तक विवाह क्यों नहीं कराया ?'

मनहरलाल कठोर स्वर में बोला—'छोड़ो, हद हो गई। मैंने इसीलिये शादी नहीं की कि कोई आकर तुझे कष्ट न दे। अब शादी करूँगा।'

शशिकला ने मुंह चिढ़ाते और ओंठ चबाते हुए कहा—'हां अब शादी करूँगा ? शादी करोगे नहीं तो जाओगे कहाँ ? सब समझ गई। कहते हैं—आधुनिक स्त्री देखकर घृणा होती है, पुराने ढंग की देखकर हृदय कांपता है, इसलिये इस शशि को ऐसा बनाया कि न नई रहे, न पुरानी, दोनों की सारी सरसता से उसे बनाया—

मनहरलाल ने अपनी दोनों आखें हाथों से बन्द कर लीं और बोला—

नहीं नहीं, यह क्या कहती हो...?'

अब शशि चाचा के सामने घुटने टेककर बैठ गई। भाव वेश में बोली—

'चाचा, हम कब तक एक-दूसरे से छिपते रहेंगे ?...'

जानते ही हो,मैं स्वेच्छाचारिणी हूं, अति आधुनिक हूं, मेरी वृत्ति वेश्या की है। मैं तुम्हें अकेला न छोड़ूंगी।'

कहते-कहते शशिकला ने आलिंगन के लिए दोनों बाँहें फैला दीं।

मनहरलाल दो पग पीछे हटकर पीड़ित स्वर में बोला—'नहीं, नहीं ! तुम्हें पता नहीं तुम क्या कह रही हो।'

शशिकला दोनों बाँहें फैलाये पुनः आगे बढ़ती हुई बोली—'मुझे अब सब पता है, मुझे सब ज्ञान हो गया है। अब बहुत हो चुका—और मेरे मुंह से कुछ सुनते हो चाचा ! तुम मुझे चाची नहीं बनाओगे ?'

मनहर ने कहा—'यह चण्डिका सबको पागल बना देती है। शशि, चलूं, यहाँ से चला जाऊँ...'

शशि ने धोंस जमाते हुए कहा—'जाओगे कहाँ लो मैं यहाँ बैठ गई। मुझे चाची बनाओ तब यहाँ से उठूंगी, नहीं तो यहीं पर मर जाऊंगी' कहकर धम्म से जमीन पर बैठ गई।

मनहरलाल बोला—'शशि ! तुम उपकार एवं भावुकता के वश होकर ऐसा कह रही हो। स समय की भूल जीवन-भर तुम्हारे लिये शूल हो जाएगी।

शशिकला भावना-विभोर स्वर में बोली—'मेरे चाचा कहने से तुमने मुझे उठा लिया। मेरी हंसी ने तुम्हें बम्बई आने की प्रेरणा दी। मैं तुम्हारे संग लिपटकर सोई तो आपको धन कमाने और संग्रह करने की प्रेरणा मिली। अब मैं कहती हूं तुम मेरे से शादी करो तो तुम्हें करनी भी पड़ेगी। मनहरलाल ने सतर्क स्वर में कहा—शशि ! पलभर की भावुकता से जीवन-भर का असंतोष

संग्रह क्यों किया जाए ? मेरे लिए नारी पवित्र है, जैसे शिव की जटा-जूट में पावन मंदाकिनी। पर तुम्हारे लिये स्त्री का अर्थ है, बाढ़.सी उफनती गंगा। फिर तेरा मेरा मेल कैसे हो सकता है ?'

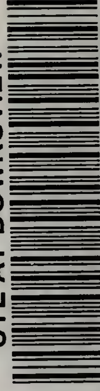
शशि बोली—'तुम्हारे संसर्ग से मैं मंदाकिनी हो जाऊँगी—पति-पावनी हो जाऊँगी।'

उत्तर में मनहरलाल कहने लगा—'चल पगली···वैसी नासमझ और भोली रही···मेरे लिए, मेरी हठ पूरी करने के लिये, मेरे पागलपन का संसार मे ढिंढोरा पिटने के लिए, मेरी कमजोरियों को शरण देने के लिये। मेरे साथ हँसने रोने, मेरे जीवन की प्यास मिटाने के लिए,, मेरे अकेलेपन को मिटाने के लिए···'

शशिकला ने उसे दोनों हाथों से पकड़ लिया और बोली—'बस मुझे अब किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं। मैं तुम्हारे लिये सब कुछ करूंगी। यदि सफल न हो सकी तो समझना–'यह वहाँ लाकर मारने वाली, व्यर्थ मुस्कराने वाली, मूर्खा—तुम्हारी शशि है।'

मनहरलाल ने दोनों हाथ फैल.कर शशि को आलिंगनपाश में बाँधते हुए कहा—'मेरी शशि !'

—: समाप्त :—


UTL AT DOWNSVIEW
D RANGE BAY SHLF POS ITEM C
39 14 30 15 10 004 6